चन्दामामा
OCT अक्तूबर १९६४ 1964

जीवन यात्रा के पथ पर शक्ति की आवश्यकता है।

इनको लाल-शर पिलाइये
(डाबर बालामृत)

डाबर (डा० एस० के० बर्मन) प्राइवेट लि० कलकत्ता-२६

चन्दामामा

अक्तूबर १९६४

“ हम सब एक होकर रहें और आपसी मेल-भाव का वातावरण बनायें तथा देश और उसके निवासियों की तरक्की के लिए काम करें। यही एक तरीका है मुल्क की सेवा का और उसे महान, अखण्ड और ताकतवर बनाने का। ”

—जवाहरलाल नेहरू

एक राष्ट्र, एक देश

“ देश के अलग-अलग भागों में रहने वाले लोगों की धारणाएं कुछ खास मामलों में चाहे जितनी भी दृढ़ हों, उन्हें यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि वे पहले भारतीय हैं और यह भी कि उन्हें सभी विवादों का हल एक राष्ट्र और एक देश के अपरिवर्तनीय ढांचे में रह कर ही करना है। ”

—लालबहादुर शास्त्री
प्रधान मंत्री

एक शक्तिशाली भारत के निर्माण का हमारा लक्ष्य साफ और सीधा है जिसमें सभी की समृद्धि हो और आजादी बनी रहे।

एक राष्ट्र के रूप में हम साहस, दृढ़संकल्प और सद्भाव व उदारता के साथ मिल-जुल कर काम करें और आगे बढ़ें।

अनुशासन और संगठित प्रयासों से ही हम आज की चुनौती का मुकाबला कर सकते हैं।

ज य हि न्द

आजादी की रक्षा के लिए एकता बनाये रखिये।

स्कूल में हर दिन चुस्त रहना जरूरी है—

टिनोपाल अधिक सफ़ेदी लाता है।

सफ़ेद कपड़ों को और चुस्त बनाता है।

चन्दामामा
संचालक : चक्रपाणी
"रामायण" का प्रकाशन तो "चन्दामामा" में अभी जारी है। पर "महाभारत" की कथा समाप्त हो गई है। अब हमने कुछ और पौराणिक कथाएँ देनी प्रारम्भ की हैं। कुछ दिन पूर्व "प्रह्लाद" की कथा दी गई थी। अब ध्रुव की दी जा रही है। इन कथाओं के चित्र ही अन्तिम पृष्ठ पर मुद्रित हो रहे हैं। आशा है आप इन्हें पसन्द करेंगे।
वर्ष : १६ अक्तूबर १९६५ अंक : २

भारत का इतिहास

ओरिसा :

चोड़गंग अनन्तवर्मा के परिपालन में (१०७६ से ११४८) तक ओरिसा एक शक्तिशाली राज्य बन गया। शिलालेखों के अनुसार वह राज्य गंगा के मुख से गोदावरी के मुख तक विस्तृत था। चोड़गंगा ने धर्म, संस्कृत और आन्ध्र भाषाओं का पोषण किया। उसके शासन में, जो प्रगति हुई उसकी साक्षी जगन्नाथालय ही है।

उसके बाद जो राजा आये, उन्होंने मुस्लिम आक्रमणों का मुकाबला किया और ओरिसा की सम्पत्ति को सुरक्षित रखा। उनमें प्रख्यात प्रथम नरसिंह (१२३८-१२६४) ने बेन्गाल के मुस्लिमों पर विजय पायी। जगन्नाथालय का निर्माण पूरा किया, कोनार्क में सूर्यालय का निर्माण भी प्रारम्भ किया। उसके बाद गंगवंश का ह्रास हुआ। सूर्य वंश के राजा आने लगे।

इस नये वंश का मूलपुरुष कपिलेन्द्र था। गंग राजाओं के समय जो कीर्ति और प्रतिष्ठा क्षीण हो गई थी उसे इसने पुनः स्थापित की। विद्रोहों को शान्त किया। बलशाली बीदर बहमनी राजाओं और विजयनगर के राजाओं को जीता। उसने अपने राज्य को गंगा से कावेरी तक विस्तृत किया। गोपीनाथपुरं के शिलालेख के अनुसार उन्होंने उदयगिरी और कंजीवरं को भी जीता।

उसके बाद पुरुषोत्तम (१४७०-१४९७) के शासन में फूट पड़ गई, और गोदावरी के नीचे का राज्य उनके हाथ से निकल गया। कृष्णा के दक्षिण का प्रान्त साल्व नरसिंहने और कृष्णा और गोदावरी

के बीच के भाग को, बहमनी राजाओं ने हथिया लिया। परन्तु पुरुषोत्तम के आखिरी समय में, जो कुछ बहमनी राजाओं ने लिया था उसमें से कृष्णा, से दक्षिण का आजकल के गुन्टूर का कुछ भाग, फिर ओरिसा को मिल गया।

पुरुषोत्तम का लड़का प्रतापरुद्र था। (१४९९-१५४०) यह चैतन्य का शिष्य था। और उसका समकालिक भी। जब यह गद्दी पर आया, तो कुछ प्रान्त इसके हाथ से जाते रहे। इसका कारण विजय नगर के राजा कृष्णदेवराय और गोलकोन्ड के कुतुबशाही नवाबों का आक्रमण था। तीन युद्धों के बाद, गोदावरी के दक्षिण का सारा ओरिसा राज्य कृष्णदेवरायलु के आधीन आ गया। १५२२ में गोलकोण्डा के कुली कुतब शा ने उरीसा पर आक्रमण किया।

कहते हैं, चैतन्य का वैष्णव धर्म, ओरीसा के राजाओं और प्रजा का कमज़ोर हो जाने का कारण कुछ हद तक था। कुछ भी हो १६ वीं सदी के प्रारम्भ से ओरिसा की शक्ति क्षीण होने लगी।

१५४१-४२ में, कपिलेन्द्र के वंश के स्थान पर भोज वंश के राजा आये। इस

वंश का यह नाम आने का कारण इसका मूल पुरुष गोविन्द है।

इसके लड़के और दो पोतों के मिलकर १८ वर्ष शासन के बाद, इस वंश को हटा कर १५५९ में मुकुन्द हरिचन्दन राजा बना। १५६८ में मरने तक यह मुसल्मानों के हमलों का मुकाबला करता रहा।

बेन्गाल के अफगान शासकों पर दो तरफ़ से हमला करने के लिए, अकबर बादशाह ने मुकन्दहरीचन्द से मैत्री करनी चाही।

मेवाड़ :

राजपुत्रों के ख्याति का स्रोत है मेवाड़। वहाँ कितने ही पराक्रमी, रणकुशल नेता, शासका, कवि, पैदा हुये हैं। मेवाड़ का सुप्रसिद्ध वंश है गुहिल राजपूत वंश। ७ वीं सदी से उनकी शान यहाँ चली आ रही है।

दिल्ली साम्राज्य के विघटन के समय, कई राजपूत राज्यों में एक नई चेतना आई। चित्तोड़ का अपमान, जो अलाउद्दीन खिलजीने किया था उसको हटाकर, पुनः यश पानेवाले मेवाड़ को, राणा कुम्भ ने फिर कीर्ति दी। यह भारत के इतिहास में प्रसिद्ध है। इसने माल्वा और गुजरात के मुस्लिम शासकों से युद्ध किया। यह प्रति युद्ध में जीता तो नहीं, पर जो कुछ पास था, उसे सुरक्षित रखा। मेवाड़ की सुरक्षा के लिए जो ८४ किले बने थे। उनमें ३२ कुम्भाराणा ने ही बनवाये थे। इसके बनाये हुए किलों में मुख्य हैं कुम्भलगढ का किला और जयस्तम्भ। कुम्भराणा कवि और पंडित था। १४६९ में इसके लड़के ने इसकी हत्या कर दी।

संग्राम राणा, (राणा सांगा) कुम्भ राणा का पोता था। १५०९ के आस पास यह मेवाड़ का राजा बना। यह बड़ा योद्धा था। इसके एक ही आँख थी। एक पैर भी न था। शरीर पर ८० घाव थे। इसने माल्वा, दिल्ली और गुजरात से युद्ध करके विजय पाई। मेवाड़ की उन्नति के लिये चूँकि इसने प्रयत्न किया था इसलिये औरों की इससे होड़ भी हो गई। इस होड़ का परिणाम ही खानव युद्ध था। इसके बारे में आगे मालूम करेंगे।

नेहरू की कथा

[३]

जवाहर की उम्र दस वर्ष की थी कि मोतीलाल का परिवार, जिस घर में रहता था, उससे कहीं बड़े घर में रहने लगा। इस घर में बड़ा बगीचा था। एक तालाब भी था। नये घर के अहाते में जवाहरलाल को नयी-नयी चीज़ें दिखाई दिया करतीं। नये मकान भी उस अहाते में बनवाये गये। जब मज़दूर, राज आदि काम में लगे रहते, तो जवाहरलाल उनको बड़े चाव से देखते।

मोतीलाल ने नये घर का नाम "आनन्द भवन" रखा।

जवाहरलाल ने अपने घर के तालाब में तैरना सीखा। उन्हें तैरने का बड़ा शौक था। खास तौर पर गरमियों में, वे घंटों तालाब में बिता दिया करते थे। तैरने के लिए कोई निश्चित समय न था।

इस तालाब के पास ही मोतीलाल और उनके अनेक मित्र शाम को आया करते। उस सरोवर के पास बिजलियाँ भी लगायी गयीं। उन दिनों अलहाबाद में बिजलियों को देखकर, लोग आश्चर्य किया करते थे। शाम के समय बड़े लोगों को सरोवर में नहाते जवाहर चाव से देखा करते थे। काफ़ी शोर शराबा हुआ करता था। डा. तेज बहादुर सप्रू, उन दिनों अलहाबाद हाईकोर्ट में जूनियर के तौर पर प्रेक्टीस किया करते थे। वे तैरना बिल्कुल न जानते थे। सीखना भी न चाहते थे। वह पन्द्रह अंगुल की सीढ़ी पर बैठ जाते और उससे निचली सीढ़ी पर भी न उतरा करते। अगर कोई पास

जब बरान्डे में इस प्रतीक्षा में थे कि कौन-सा बच्चा पैदा होता है, तो डाक्टर ने मज़ाक करते हुए कहा—"बहिन पैदा हुई है। तुम्हारी मिल्कियत में हिस्सा नहीं बाँटेगी, डरो मत।" जवाहर को यह सोच बड़ा गुस्सा आया कि दूसरे उनको इतना कमीना समझते थे।

कुछ काश्मीर ब्राह्मणों ने कहा कि मोतीलाल यूरुप हो आये थे, इसलिए उनको प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। मोतीलाल ने यह करने से इनकार कर दिया। उससे कुछ दिन पहिले पं. विशन नारायण दर, जो काश्मीर ब्राह्मण थे, लॉयर बनने से पहिले यूरुप जाकर प्रायश्चित्त कर चुके थे। फिर भी कट्टर काश्मीर ब्राह्मणों ने उनका बहिष्कार कर दिया था। इस कारण काश्मीरी ब्राह्मणों में दो "पार्टियाँ" बन गयी थीं। आधे इस पार्टी में और आधे दूसरी पार्टी में थे। परन्तु शनैः शनैः यूरुप में पढ़कर आनेवालों की संख्या बढ़ने लगी। वे स्वदेश आकर "संस्कार" आदि के साथ, फिर जाति में प्रविष्ट कर लिए जाते थे। पर उन्होंने "प्रायश्चित्त" का संस्कार नहीं छोड़ा था। प्रायश्चित्त

आता, तो ज़ोर से चिल्लाते। मोतीलाल भी तैरना न जानते थे। फिर भी वे दान्त भींचकर तालाब में एक सिरे से दूसरे तक हाथ पैर हिलाते जाते और खूब थक जाते।

उन्हीं दिनों जवाहरलाल के एक छोटी बहिन पैदा हुई। तब तक उनको इस बात का बड़ा दुःख था कि उनके न कोई बहिन थी, न भाई ही। सिवाय उनके, हर किसी के भाई और बहिन थे। तब जाकर उनकी यह इच्छा पूरी हुई। प्रसव के समय मोतीलाल यूरुप में थे। जवाहर

भी नाम मात्र-सा था। उसका धर्म से कोई सम्बन्ध न था। वे कट्टरवादियों की आँखों में धूल झोंकने के लिए यह सब तो कर दिया करते, पर बाद में वह सब करते, जो उनको नहीं करना चाहिए था।

मोतीलाल एक और कदम उनसे आगे थे। उन्होंने प्रायश्चित्त करने से ही इनकार कर दिया। यही नहीं, उन्होंने उनका निरादर भी किया, जिन्होंने उन्हें प्रायश्चित्त करने के लिए कहा था। बड़ा हो हला मचा। उस हो हल्ले में कई काश्मीरी ब्राह्मण परिवार, मोतीलाल की "पार्टी" में आ गये। परन्तु समय के साथ उनके दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आने लगे। हठधर्मी जाती रही। तीनों पार्टी मिल मिला-सी गयीं।

कितने ही काश्मीरी युवक अमेरिका और इन्गलैण्ड पढ़ने के लिए गये। उनसे किसी ने प्रायश्चित्त करने के लिए भी नहीं कहा।

जवाहरलाल जब ग्यारह वर्ष के थे, एक नया ट्यूटर नियुक्त हुआ। उसका नाम फर्डिनान्ड ब्रुक्स था। यह थियोसिफिस्ट था, मोतीलाल को इसकी सिफारिश अनी बिसेन्ट ने की थी। उसने जवाहरलाल को तीन वर्ष शिक्षा दी। उन पर उसका बहुत प्रभाव पड़ा।

उसी समय जवाहरलाल नेहरू का एक और बूढ़ा पंडित था। वह उनको हिन्दी और संस्कृत सिखाने के लिए नियुक्त था। परन्तु वह अपने प्रयत्न में सफल न हुआ, चूँकि जवाहरलाल नेहरू संस्कृत नहीं जानते थे।

ब्रुक्स के कारण, जवाहरलाल को पुस्तकों के प्रति आसक्ति हुई। जो अंग्रेजी

पुस्तक हाथ लगती वे उसे पढ़ जाते। ब्रुक्स के कारण उनको विज्ञान में भी दिलचस्पी हुई। उन दोनों ने मिलकर एक छोटी-सी विज्ञानशाला भी बनवाई। उसमें रसायिनिक, भौतिक परीक्षण करते जवाहरलाल नेहरू घंटो रहते।

जवाहर पर ब्रुक्स का प्रभाव एक और ढंग से भी पड़ा। वे हर सप्ताह, अपने कमरों में सभायें किया करते और थियोसिफी के भाव और परिभाषायें समझने की कोशिश करते। पुनर्जन्म, कर्म सिद्धान्त आदि, पर भाषण हुआ करते। जवाहर को उनकी बातें पूरी तरह तो समझ में नहीं आतीं पर वे जानते थे कि वे संसार के आधारभूत रहस्यों के बारे में बातें कर रहे थे। वह धर्म और लोकों के बारे में पहिले पहल सोचने लगे। उपनिषद, भगवगदीता में वर्णित, हिन्दू धर्म के बारे में उनको आदर होने लगा। वे हवाई किले भी बनाने लगे।

उन दिनों अनी बिसेन्ट ने आकर अलहाबाद में थियोसिफी पर भाषण किये। उनके भाषण सुनकर, उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर, तेरह वर्ष की उम्र में ही जवाहर ने थियोसिफिकल सोसाइटी में शामिल होने का निश्चय किया। उन्होंने अपने पिता की अनुमति माँगी। मोतीलाल ने हँसते हँसते हाँ तो कह दिया, पर कोई परवाह नहीं की। अनी बिसेन्ट ने स्वयं जवाहरलाल को उपदेश दिया। परन्तु थियोसिफी में जवाहरलाल की यह दिलचस्पी बहुत दिन न रही। ब्रुक्स के चले जाने के बाद, वह दिलचस्पी भी चली गई।

[अभी है]

[४]

[जब से जगतसिंह को देखा था, तब से दुर्गेशनन्दिनी तिलोत्तमा उससे प्रेम करने लगी थी। उसके प्रेम में सूखकर काँटा हो गई थी। पहिले मिलन में विमला ने जगतसिंह को तिलोत्तमा के बारे में कुछ भी न बताया। परन्तु उसने वचन दिया कि पन्द्रह दिन बाद वह मन्दिर में उससे मिलकर सब कुछ बता देगी। निश्चित दिन आ गया। विमला सजधज कर उसके पास जा रही थी कि दुर्गपति वीरसिंह के यहाँ से उसको बुलावा आया।]

“यह वेष बदलकर जाओ” तिलोत्तमा ने विमला को सलाह दी।

“कोई डर नहीं” कहती विमला, तिलोत्तमा के कमरे से वीरेन्द्रसिंह के कमरे में गई।

वह लेटा हुआ था। एक दासी उसके पैर दबा रही थी। एक और पंखा झल रही थी। विमला ने उसके पलंग के पास जाकर पूछा—“कहिये! क्या हुआ है?”

उसने जो सिर उठाकर उसका साज श्रृंगार देखा, तो चकित होकर पूछा—“लगता है कहीं काम पर जा रही हो।”

“जी....कहिये....क्या हुआ है!” विमला ने पूछा।

श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय

"तिलोत्तमा कैसी है?"

"अच्छी ही है!"

"अस्मानी जाकर तिलोत्तमा को बुला लायेगी। तब तक तुम पंखा झलो।" बीरेन्द्रसिंह ने कहा। अस्मानी पंखा नीचे रखकर चली गई।

विमला ने अस्मानी को बाहर रहने का इशारा किया। बीरेन्द्रसिंह ने दूसरी दासी से कहा—"तुम पान वगैरह तैयार करो।" उसे भी यूँ भेजकर उसने विमला से पूछा—"क्यों, विमला क्यों यूँ तैयार हुई हुई हो?"

"मुझे कुछ काम है, इस साज शृंगार से।"

"वह काम क्या है, मैं जानना चाहता हूँ।"

"तो सुनिये, आज मैं अपने प्रिय के पास जा रही हूँ।"

"यमराज के पास?"

"क्यों उसका मनुष्य होना सम्भव नहीं है?"

"उस तरह का आदमी कभी पैदा नहीं हुआ है!"

"सिवाय एक के...." कहती विमला झट उठकर चली गई। उसने बाहर खड़ी अस्मानी से कहा—"तुम्हें एक रहस्य बताना है।" "आज मैं एक मुख्य काम पर बहुत दूर जा रही हूँ। रात के समय अकेली नहीं जा सकती। साथ ले जाने के लिए सिवाय तुम्हारे मुझे और किसी पर भरोसा नहीं है। हाँ, क्या कोई ऐसा है जो तुम्हें पहिले जानता हो अब तुम्हें पहिचान सके?" विमला ने कहा।

"किसकी बात कह रही हो?"

"मान लो कुमार जगतसिंह ने तुम्हें देख लिया।

"इतनी किस्मत!"

"क्यों ऐसी भी क्या बात है?"

"युवराज, जरूर मुझे पहिचान लेंगे।"

"तो तुम मेरे साथ न आओ, फिर मैं अकेली भी नहीं जा सकती।" विमला दुविधा में पड़ गई। अस्मानी अंचल मुख में ठोंसकर हँसने लगी।

"क्यों यूँ मुख में कपड़ा ठोंसकर हँस रही हो?" विमला ने पूछा।

"दिग्गज जो है, अगर तुम उसे साथ ले गई तो?" "अच्छा ख्याल है। "रसिक राजा" को साथ ले जाऊँगी।"

"वाह....वाह....मैंने तो यूँ ही मज़ाक किया था।"

"मज़ाक नहीं यह मूर्ख कुछ भी नहीं जानता। इसलिए उससे कोई भी खतरा नहीं है। पर शायद वह ब्राह्मण कहे कि वह साथ न आयेगा।"

"यह सब मेरे जिम्मे छोड़ दो। यदि तुम द्वार के पास रही, तो मैं उसे तुम्हारे पास भेज दूँगी।" कहती अस्मानी चली गई।

अस्मानी जब दिग्गज के घर गई तो दरवाज़ा बन्द था। "अरे महाराज" अस्मानी ने आवाज़ दी।

एक दो बार फिर पुकारा पर अन्दर से कोई आवाज न आयी, जब उसने दरवाजे के छेद में से देखा, तो पाया कि "रसिक राजा" भोजन कर रहा था। इसलिए ही वह ब्राह्मण बोला न था।

"यह ब्राह्मण क्या मुझसे बात करके फिर भोजन नहीं करेगा! देखती हूँ।" यह सोचकर अस्मानी जोर से चिल्लायी।

दिग्गज ने कहा—"ऊँ....ऊँ"

"अन्दर कोई स्त्री है शायद! तुम तो भोजन करते बोलते नहीं न हो ब्राह्मण! देख सबको बताती हूँ।" अस्मानी ने कहा।

दिग्गज ने चारों ओर देखा, किसी को आसपास न पाकर, वह भोजन करने लगा।

"मैं जानती हूँ। बात करके फिर खाना शुरु कर दिया है।" अस्मानी ने कहा।

दिग्गज ने घबराकर कहा—"मैंने कब बात की है!"

अस्मानी ने खिलखिलाकर हँसकर कहा—"क्या यह बात करना नहीं है!"

"तो अब भोजन कैसे किया जाये!" दिग्गज ने पूछा।

"तो दरवाज़ा बन्द करो।" दरवाज़े के छेद में से सब कुछ देखते हुए अस्मानी ने कहा। दिग्गज को भोजन पर से उठता देख उसने कहा—"उठो न....न उठो भोजन करो।"

"बात कर बैठा हूँ। भोजन नहीं करूँगा।" दिग्गज ने कहा।

"भोजन करो भी...."

"राम राम....ब्राह्मण हूँ, बात करके फिर कैसे भोजन करूँ!"

"यही बात है, तो मैं जा रही हूँ। आज मैं तुम्हें एक मुख्य बात बताना चाहती थी। अब सब मामला बिगड़ गया है। मैं जा रही हूँ।"

"नहीं, नहीं, अस्मानी! तुम यों नाराज़ न हो। यह देखो खा रहा हूँ।" कहते हुए दिग्गज ने दो तीन कौर मुख में रखे थे कि अस्मानी ने कहा—"काफ़ी है। अब उठकर दरवाज़ा खोलो।"

"अभी दो तीन कौर बाकी हैं, उन्हें भी खाने दो।"

"दरवाज़ा खोलते हो या सब से कहने के लिए, कहते हो कि खाते समय तुम बोले थे?"

दिग्गज उठा। हाथ और मुँह धोकर उसने दरवाज़ा खोला। अस्मानी के अन्दर आते ही उसने कहा—"वर दे देवी!"

"कितनी अच्छी कविता है। इसी के लिए तो तुम्हें "रसिक राजा" नाम दिया गया है।

"बताओ....क्या बात है? आजकल तुम बिल्कुल ही नहीं दिखाई दे रही हो।" दिग्गज ने कहा।

"अरे....थाली में....भोजन यूँ ही रह गया है, पहिले खालो, फिर बात करेंगी।" अस्मानी ने कहा।

"अरे....खाकर ही तो उठा हूँ।"

"उपवास करोगे क्या?"

"क्या करूँ? तुमने जो मुझे उठा दिया है।" इतने में वहाँ विमला आ गई।

उसने दिग्गज को भोजन करने के लिए कहा। दिग्गज भूखा था, इसलिए उसने भोजन पूरा कर लिया।

"रसिक राजा, आज तुमसे बड़ा काम आ पड़ा है!" विमला ने कहा।

"क्या है वह?" दिग्गज ने कहा।

"तुम हम दोनों को चाहते हो न? हम क्यों आयी हैं? जानते हो?" विमला ने पूछा।

"हम तुम्हारे साथ चली जाना चाहती हैं।" अस्मानी ने कहा।

ब्राह्मण ने चकित होकर पूछा—"कब?"

"अभी....तुरत....देखते नहीं हो, मैं तैयार हूँ।" विमला ने कहा।

तीनों मिलकर चल पड़े।

"हम फिर कब वापिस आयेंगे?" दिग्गज ने पूछा।

"जो जा रही हैं, वे वापिस क्यों आयेंगी। क्या तुम इतना भी नहीं जानते?"

दिग्गज अपनी नादानी पर शर्मिन्दा हुआ। कुछ दूर जाने के बाद अस्मानी ने कहा—"तुम चलते रहो, मैं बाद में आ मिलूँगी।" वह उन्हें छोड़कर सीधे घर चली गयी। और कुछ दूर जाने के बाद दिग्गज ने विमला से पूछा—"अस्मानी खो गई? क्यों नहीं आयी है?"

"काम पर घर गई है, शायद आ नहीं सकी है!" विमला ने आगे चलते हुए कहा।

दोनों मन्धारण पार कर गये। विमला बड़ी तेज़ी से चल रही थी। अन्धकार बढ़ता जाता था। कहीं कोई चहल-पहल न थी। विमला ने दिग्गज से कहा—"क्या तुम भूतों से डरते हो? इस रास्ते पर खासकर रात में भूतों का अधिक डर है!"

दिग्गज डर गया—आगे बढ़कर, विमला का आँचल पकड़ लिया।

"उस दिन जब हम शैलेश्वर मन्दिर से आ रही थीं, तो बड़ के पेड़ पर भयंकर आकृति दिखाई दी थी।" विमला ने कहा। दिग्गज को काँपता देख, यदि भूतों की बात न छोड़ी गई, तो यहीं यहीं गिर जायेगा—विमला ने बात बदलने के लिए कहा—"रसिक राजा! क्या तुम गाना जानते हो? एक गाना तो सुनाओ।"

गाना सुनती विमला आगे जा रही थी कि उसके आँचल में झटका-सा लगा। उसने पीछे मुड़कर पूछा—"क्या बात है?"

दिग्गज ने हीन स्वर में कहा—"देखो, देखो...." उसने एक मरते हुए घोड़े को दिखाया। उस घोड़े पर जीन थी।

विमला व्याकुल-सी आगे बढ़ती जाती थी। जब वे एक मील चले, तो उनको एक सैनिक की पगड़ी दिखाई दी।

इतने में चन्द्रमा का उदय हुआ। विमला को अन्यमनस्क पा, दिग्गज ने पूछा—"क्यों नहीं, कुछ कहती हो?"

"रास्ते में तुमने घोड़े के निशान देखे थे न? तुम कुछ समझ सके?"

"नहीं, तो...."

"मेरा घोड़ा, सैनिक की पगड़ी, घोड़ों के निशान—कुछ समझ में आया? तुम्हें पूछने से भी क्या फायदा?" विमला ने कहा। इतने में उनको शैलेश्वर मन्दिर का शिखर दिखाई दिया। यह सोच कि अब दिग्गज को साथ रखने की ज़रूरत न थी, उसने उसको भयंकर भूतों की कहानियाँ सुनाईं। दिग्गज उन्हें सुन, सिर पर पैर रखकर, मन्धारण किले की ओर भागने लगा।

विमला मन्दिर के द्वार के पास आयी। दरवाज़े को अन्दर से बन्द पा—उसने दरवाज़ा खटखटाया।

अन्दर से आवाज़ आई—"कौन हो?"

"थकी हुई औरत!" अपने हौसले को जमा करते हुए विमला ने कहा।

द्वार खुला। मन्दिर में दीप जल रहा था। तलवार लिए हट्टे-कट्टे आदमी को विमला ने पहिचान लिया। वह जगतसिंह ही था।

[अभी है]

सच नहीं छुपता

अन्धेरी देश के राजा के एक के बाद एक पाँच लड़के हुए, परन्तु एक भी लड़की न हुई। राजा को यह चिन्ता सताने लगी कि वह कन्यादान न कर सकेगा। राजा को कई ने सलाह दी कि एक और शादी करने से इस चिन्ता का निवारण हो सकेगा।

उनकी सलाह पर, राजा ने पड़ोस के राजा की लड़की ऊर्मिला से विवाह किया। ऊर्मिला बड़ी सुन्दर थी, पर दुष्ट स्वभाव की थी। उसने राजा को वश में कर लिया और राजा से उसने बड़ी रानी चन्द्रमति और उसके पाँच लड़कों को घर से निकलवा दिया।

चन्द्रमति राजपुरोहित की सहायता से एक गाँव में पहुँची। वहाँ बिना किसी से कहे अपने लड़कों के साथ रहने लगी। तब वह गर्भवती थी।

जैसे और गाँववाले मेहनत करके जीते थे उसी तरह चन्द्रमति और उसके लड़के भी जी रहे थे। चन्द्रमति के लड़के गुरु के पास पढ़ते हुए जंगल से ईन्धन लाया करते और जानवरों का शिकार करते।

चन्द्रमति ने सोचा कि यदि छटी सन्तान लड़की हुई तो उस पर पति की फिर कृपा होगी—और उसका जीवन फिर बदल सकेगा। परन्तु उसकी यह आशा पूरी नहीं हुई।

राजपुरोहित ने चन्द्रमति के पास खबर भिजवाई कि छोटी रानी की चिढ़ अभी न गई थी। यदि लड़की पैदा हुई, तो उसको मारने के लिए कुछ आदमियों को

दिया। राजा को, जो इस आशा में था कि इस रानी के लड़की पैदा होगी, बड़ी निराशा हुई।

उर्मिला के लड़के का नाम जयन्त रखा गया। वह बड़ा हो गया। जब वह पन्द्रह वर्ष का था, तो नौकर चाकरों के साथ शिकार के लिए निकला। कुछ समय तक जंगल में घूमने फिरने के बाद उसे भूख और प्यास लगी। उसने एक पेड़ पर से एक फल तोड़कर खा लिया। वह चूँकि जहरीला था, इसलिए उसे खाते ही तुरत बेहोश हो गया।

नियुक्त किया गया है। इसलिए यदि लड़की पैदा हो तो वह किसी को न बताया जाये, सब से यही कहा जाये कि लड़का ही पैदा हुआ है।

अच्छा हुआ कि यह खबर समय पर मिल गई। इस बार चन्द्रमति ने लड़की को ही जन्म दिया। परन्तु उसने गाँव में कहलवा दिया कि उसके लड़का पैदा हुआ था। यह खबर भेदियों द्वारा ऊर्मिला के पास भी पहुँची। उसका मन शान्त हुआ। चन्द्रमति के प्रसव के कुछ दिन बाद, ऊर्मिला ने एक लड़के को जन्म

उसी समय उसके पाँचों भाई ईन्धन के लिए जंगल में आये। उसे देखकर वे उसे घर ले गये। उससे उलटी करवाई। उसे पीने के लिए दूध दिया। उसे मरने से बचाया।

जब होश आया तो जयन्त पाँचों भाइयों और उनकी बहिन को देखकर बड़ा खुश हुआ। उसने अपनी कृतज्ञता दिखाकर बताया कि वह कौन था।

जब चन्द्रमति को मालूम हुआ कि वह ऊर्मिला का लड़का था, तो उसको अपनी दुस्थिति याद हो आई। उसकी आँखों में

तरी आ गई। यह देख, जयन्त ने उनके बारे में प्रश्न किये।

चन्द्रमति ने बताया कि सोलह वर्ष पहिले उसका पति उसको और उसके बच्चों को गाँव में छोड़कर कहीं चला गया था। जैसे तैसे कष्ट झेलकर उसने अपने बच्चों को पाला पोसा था और छटी सन्तान वरदा देवी कई दिन लड़कों के कपड़े पहिनकर लड़के की तरह पाली पोसी गई थी। पर जब वह बड़ी होने लगी, यह सोचकर दुनियाँ उसको भूल गई थी, वह उसको लड़कियों के कपड़े पहिनने लगी।

जयन्त ने चन्द्रमति की परिस्थिति देखकर तरस खाकर कहा—"मैं अपने यहाँ पहुँचते ही तुम्हारे लड़कों की नौकरी का इन्तज़ाम करके तुम्हें बुलाऊँगा। आप सब आकर, राजधानी में सुख पूर्वक रहिये।"

"नहीं बेटा, हम यहीं भले हैं। अच्छे हैं।" चन्द्रमति ने कहा।

जयन्त ने घर पहुँचते ही जो कुछ गुज़रा था, अपनी माँ से कहा। चन्द्रमति, उसके लड़के और लड़की का उसने वर्णन किया। ऊर्मिला जान गई कि वह चन्द्रमति

पकवान और कपड़े तैयार करवा दिये हैं। बिना किसी से कहे, नौकर से उन्हें उठा कर, तुम उनके घर जाओ। मेरी तरफ़ से उनको ये उपहार दे देना।"

अगले दिन जयन्त का नौकर पकवान आदि लेकर, जंगल के पास गाँव की ओर जा रहा था कि नौकर से ऊर्मिला ने कान में कहा—"यह देखना कि युवराज इनको न खाये। यह मामूली आदमियों के लिए बनाये गये पकवान हैं।"

जयन्त जब पहुँचा, तो चन्द्रमति और उसके बच्चे घर में ही थे। नौकर जो समान लाया था, वह सब चन्द्रमति के सामने रखकर, जयन्त ने कहा—"मेरी माँ ने ये सब आपके लिए भेजे हैं।"

"हमारे लिए क्यों इतनी तकलीफ़ उठाई है!" चन्द्रमति ने पूछा।

जयन्त के साथ आये हुए नौकर ने चन्द्रमति के लड़कों से कहा—"खाइये न...." वह उनको रह-रहकर कहने लगा। मनाने लगा।

चन्द्रमति ने उससे कहा—"हमारे बच्चे जब चाहे कुछ नहीं खाते हैं। मैं समय पर उनको दे दूँगी।" कहकर

राजा की पहिली पत्नी थी। वह यह भी जान गयी कि जब छटी सन्तान लड़की हुई थी तो झूठा प्रचार किया गया था।

इसलिए उसने अपने लड़के से कहा—"बेटा, तुम्हारे पिता की नौकरी में एक राजद्रोही हुआ करता था। जिनका तुम ज़िक्र कर रहे हो, वे शायद उसके बच्चे हैं। दण्ड से घबराकर, वह राजद्रोही भाग गया। कुछ भी हो, चूँकि उन्होंने तुम्हें प्राण दान किया है, इसलिए उनका उचित आदर करना तुम्हारा कर्तव्य है। मैने उनके लिए

वह उन वस्तुओंको अन्दर ले गयी। उन पकवानों में से कुछ कुछ लेकर, उसने कौव्वों को खिलाया। वह हमेशा इस तरह ही करती आयी थी, पर इस बार कौव्वे पकवान खाकर, छटपटाने लगे।

कौव्वों का शोर सुनकर, जयन्त भागा भागा पिछवाड़े में गया, मरते हुए कौव्वों को देखकर उसने पूछा—"यह क्या है? क्या हो गया है इन्हें?"

"यह ऐसी बात नहीं है, जिसे सुनकर तुम खुश होगे! तुम नादान हो, निर्दोष हो। पर ये खाने की चीज़ें हमारे खाने लायक नहीं हैं।" चन्द्रमति ने उससे कहा।

कुछ भी हो, उसकी माँ ने उस कुटुम्ब के लिए जहरीले चीज़ें भेजी थीं। यह नौकर भी जानता होगा। इसलिए ही वह चन्द्रमति के लड़कों को खाने के लिए रह-रहकर कह रहा था। उस नौकर का हाथ पकड़कर जयन्त ने पूछा—"क्या तुम जानते थे कि इन खाने की चीज़ों में जहर है?" नौकर ने कहा कि वह न जानता था।

"तो....मैं इनको खाता हूँ।" जयन्त ने कहा।

"रानी साहिबा ने बार बार कहा था कि आपको इन्हें न खाने दिया जाये।" नौकर गिड़गिड़ाने लगा।

यानि मेरी माँ इस परिवार से चिढ़ती है। इस चिढ़ का क्या कारण है? यदि यह केवल राजद्रोही का ही कुटुम्ब है, तो मेरी माँ इनको मारना नहीं चाहेगी। इसका जरूर कोई और जबर्दस्त कारण है।

उसके पिता की पहिली पत्नी थी, उसे उसके पिता ने बच्चों के साथ घर से निकाल दिया था—जयन्त ने कभी सुन रखा था, कहीं ये ही तो वे लोग नहीं हैं?

कुछ भी हो, आखिर देखा जाये कि बात है क्या! जयन्त ने नौकर से कहा—"मैं घर नहीं जाऊँगा। यहीं रहूँगा। जाकर मेरी माँ से कहो कि इनके साथ मैं भी ये चीज़ें खाऊँगा।" उसने नौकर के देखते एक पकवान लिया। पिछवाड़े में चला गया और वहाँ से यूँ चिल्लाया, जैसे मर रहा हो।

नौकर भागा भागा ऊर्मिला के पास गया। उससे कहा—"युवराज ने, जो पकवान आपने भेजे थे, उन्हें खा लिया और वे चिल्लाकर गिर पड़े।"

ऊर्मिला छाती पीटने लगी—"बड़ी रानी ने मेरे लड़के को विष दे दिया है।" राजा, ऊर्मिला और नौकर-चाकरों को लेकर चन्द्रमति के घर गया। ऊर्मिला ने चन्द्रमति को देखते ही कहा—"राक्षसी! तुमने मेरे लड़के को मारकर बदला निकाल लिया है।"

जयन्त ने बाहर आते हुए कहा—"पहिले यह बताओ कि क्या बदला निकालने के लिए तुमने इन सब को विष देकर मारने की कोशिश की थी!"

जल्दी ही राजा सारी परिस्थिति जान गया। उसे पश्चात्ताप हुआ कि उसने अपने लड़कों और पत्नी को घर से बाहर जंगलों में कष्ट भोगने दिया था। उसे बड़ा दुख हुआ कि ले देकर उसके एक लड़की हुई और वह भी उसकी आँखों के सामने लाड़ प्यार से न पल सकी।

वह चन्द्रमति और बच्चों को अपने साथ ले गया। ऊर्मिला को जेल में डलवा दिया। अपने बड़े लड़के को युवराजा बनाया। उसने अपने लड़की के लिए उचित वर खोजा, उसे कन्यादान करके, अपनी बहुत दिनों की इच्छा उसने पूरी कर ली।

मेंढकों का राजा

सृष्टि की आदि में एक बड़े तालाब में लाखों मेंढक थे। वे बड़ा शोर शराबा करते। हमेशा चिल्लाते रहते। एक दूसरे की न सुनते। कोई किसी के कहने पर कुछ न करता।

यह देख एक बूढ़े अक़्लमन्द मेंढक ने बड़ी कोशिश करके सब मेंढकों की एक सभा बुलाकर यों कहा—

"सृष्टि में बहुत-से प्राणी हैं, पर मेंढकों की तरह अनियन्त्रित, निरर्थक प्राणी कोई नहीं है। हम जो कहते हैं, हमें ही नहीं मालूम है। क्यों, कहाँ जाते हैं, यह भी हम नहीं कह सकते। हमारा कोई क्रमबद्ध नियमित जीवन भी नहीं है। यह सब इसलिए है क्योंकि हम सब को नियन्त्रण में रखने के लिए कोई राजा नहीं है। यदि कोई राजा हुआ तो हम सब अनुशासित रूप में जीवन निर्वाह कर सकेंगे। आपका क्या ख्याल है?"

अक़्लमन्द बूढ़े मेंढक ने जो कहा था, वे और मेंढक भी जानते थे। वे मान गये कि एक राजा के होने पर ही उनका जीवन सुधर सकेगा। सब मेंढकों की अनुमति पर बूढ़ा मेंढक वरुण देव के पास गया। "महाशय, हमें मेंढकों के लिए एक राजा दीजिए।" उसने विनयपूर्वक कहा।

"इसमें क्या रखा है—मैं एक राजा तुम्हारे लिए भेज दूँगा।" वरुण ने यह कहकर बूढ़े मेंढक को भेज दिया।

बूढ़े मेंढक ने यह शुभ वार्ता तालाब के मेंढकों को दी। तब से मेंढक सिर

मेंढकों को कुछ न दिखाई दिया। वे अन्धा-धुन्ध इधर उधर भागने लगे।

"मेंढकों का राजा आ गया है।" अफवाह उड़ गई। कुछ साहसी मेंढकों ने अपने राजा को दूर से देखकर कहा—"हमारा राजा कितना बड़ा है!" जो मेंढक उस जगह थे, जहाँ पत्थर गिरा था, उन्होंने बढ़ा चढ़ाकर उसके बारे में छोटे मेंढकों से कहा।

मेंढकों के जीवन में बड़ा परिवर्तन आ गया। उन्होंने हमेशा शोर करना छोड़ दिया। धीमे-धीमे बातें करने लगे। वे उठाकर आकाश की ओर देखने लगे कि कब उनके लिए राजा आता है।

वरुण ने मेंढकों के प्रतिनिधि की प्रार्थना याद करके एक बड़े पत्थर को, जो आकृति में मेंढक से मिलता जुलता था, मेंढक के तालाब में फिकवा दिया।

वह पत्थर तालाब में इस तरह गिरा, जैसे हज़ार बिजलियाँ एक साथ गिरी हों, पानी की तह में कीचड़ में धुस गया। तालाब में इतनी बड़ी तरंगें उठीं कि वैसी तरंगें बड़े तूफ़ान में भी न उठती थीं। पानी इस तरह कल्लोलित हो उठा कि

ध्यान से सुनने लगे कि कब उनका राजा उनको बुलाता है। वे राजा की तरफ़ न जाते, जहाँ भी जाते, देखभाल कर जाते। वे सतर्क रहने लगे। मेंढकों के जीवन में बड़ी प्रगति दिखाई देने लगी।

परन्तु यह प्रगति बहुत दिन नहीं रही। छोटे मेंढकों ने अपने राजा के बारे में कुछ बातें मालूम कर लीं। उनमें से कुछ ने साहस करके पास जाकर अपने राजा को देखा। मेंढकों का राजा हिलता-डुलता न था। हमेशा एक ही तरफ़ देखता। मुख नहीं खोलता, शायद खोलने के लिए

उसका कोई मुख था ही नहीं। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि राजा के शरीर पर काई बढ़ रही थी।

छोटे मेंढ़क बड़े मेंढ़कों के सामने अपने राजा को नीचा दिखाने लगे। "भाई राजा है ऐसा नहीं कहना चाहिए।" बड़े मेंढ़क कहा करते। यह सुनकर छोटे मेंढ़क राजा को और भी छोटा समझने लगे। आखिर बड़े मेंढ़क राजा के पास गये। उन्हें मालूम हुआ कि जो कुछ छोटे मेंढ़क कह रहे थे, उसमें कोई झूठ न था। जल्दी ही मेंढ़कों का जीवन पहिले की तरह हो गया।

अक़्लमन्द बूढ़ा मेंढ़क यह देख कि उसका सारा प्रयत्न विफल हो गया था, फिर वरुण के पास गया। उसने यह दिखाने के लिए कि उनको राजा की कितनी ज़रूरत थी, एक भाषण-सा दिया। वरुण ने सब सुनकर कहा—"मैंने, जो राजा पहिले भेजा था, वह क्या तुम्हारे काम नहीं आया? एक और राजा भेजूँगा। जाओ।"

उसने एक मगर भेजा। एक दिन वह मगर चुपचाप तालाब में घुसा। एक छोटी-सी तरंग पानी में आयी। यह नया राजा एक जगह न रहकर सारे तालाब में घूमता। यदि प्रजा में से कोई उसके मुख में आता, तो उसे न छोड़ता।

मेंढ़क जान गये कि उनको ठीक राजा मिल गया था। पुरानी आदत के अनुसार अगर कभी वे चिल्लाते भी तो पास पानी का हिलना देख या कोई आवाज़ सुन झट मुख बन्द कर लेते। कहीं पीछे से राजा न आ पड़े, इसलिए वे पीछे की ओर देखना भी जान गये। मेंढ़कों के जीवन में एक नियन्त्रण और अनुशासन आ गया।

लालच का फल

दण्डकारण्य के पहाड़ी इलाके में एक जंगली जाति रहा करती थी। उस जाति में दो भाई थे। दोनों अधेड़ थे। उस जाति में हर कोई उनकी सलाह माँगते, उनको छोटे छोटे उपहार भी लाकर देते।

इन उपहारों से वे भाई अपना जीवन निर्वाह नहीं कर पाते थे। फिर भी उनको कोई कमी न थी। कभी कभी वे पहाड़ों की ओर भी हो आते। पर कोई न जानता था कि कहाँ जाते थे और क्यों आते थे।

उन भाइयों के पास एक अनाथ शिशु था—नाम था तुन्गनाथ। उनकी जाति का ही था। जो छोटे मोटे काम उनके होते, वे उससे करवा लेते। तुन्गनाथ भी उनके पहाड़ों में आने जाने के बारे में नहीं जानता था।

भाइयों में छोटे भाई को कुछ दिन बुखार आया और वह मर गया। तब से बड़े भाई पर मुसीबतें आने लगीं। तूफ़ान में घर भी गिर गया। यदि भाई जीवित रहता तो मिनिट में एक और मकान बन जाता। परन्तु उस भाई को देखकर लगता था, जैसे उसमें उस घर की मरम्मत करवाने की शक्ति ही न हो। अनाज भी कम हो गया था। इस तरह की हालत पहिले कभी न हुई थी। तुन्गनाथ, जो तीन बार दिन में खाता था, एक बार भी ठीक तरह न खा पाता। वह "बाबा" के मुँह पर प्रायः दुःख देखता।

एक बार "बाबा" ने तुन्गनाथ से कहा—"अरे तुन्ग, यदि तुमको एक रहस्य बताऊँ तो किसी को बताये बिना रहोगे?"

"वाह, क्यों नहीं !" तुन्गनाथ ने कहा।

"तो आज रात कुछ खाने के लिए पोटली में बाँध लो। कल हमें जाना है।" बूढ़े ने कहा।

अगले दिन सवेरे घर में ताला लगाकर पड़ोसी से गौ को दुहकर थोड़ा चारा डालने के लिए कह, दोनों नन्दी पहाड़ की ओर चले। थैले में कुछ रखकर, छड़ी घुमाते बूढ़ा आगे चल रहा था, तुन्गनाथ हाथ में जौ की रोटी और हाथ में गठरी लेकर चल रहा था।

नन्दी पहाड़ के नीचे के जंगल में दोनों घुसे। पेड़ों के बीच में से पहाड़ पर चढ़ते शाम होते होते कई मील चलकर वे एक गुफ़ा में पहुँचे। क्योंकि पहाड़ के ऊपर से बेलें लटक रही थीं, इसलिए तुरत जाना भी न जा सकता था कि वहाँ गुफ़ा थी। उन दोनों ने उस दिन रात को गुफ़ा के द्वार पर खाया, पिया और वहीं आराम से सो गये।

अगले दिन सवेरा होते ही बूढ़े ने तुन्गनाथ को अपने पीछे आने के लिए कहा और वह गुफ़ा में चलने लगा। उन्हें अन्दर जाने के लिए एक छोटे से छेद में से रेंगते जाना पड़ा। परन्तु अन्दर जाने पर गुफ़ा बड़ी विशाल और ऊँची थी। लेकिन अन्दर बड़ा अन्धेरा था। बूढ़े ने एक मोमबत्ती निकाली, उसकी रोशनी में आगे बढ़ने लगा। तुन्गनाथ बाबा के पीछे पीछे चला।

गुफ़ा में बहुत दूर जाने के बाद बूढ़े ने मोमबत्ती को एक ऊँचे पत्थर पर रखकर कहा—"अरे तुन्ग, मैं एक जादू करने जा रहा हूँ। तुम मेरी मदद करो। पहिले मेरा भाई मेरी मदद किया करता था, अब तुम उसका काम करो।"

तुन्ग का दिल धड़धड़ करने लगा। वह डर गया। पर उसने सिर हिलाया कि वह कर देगा।

बूढ़े ने थैली में से एक लोहे की तश्तरी, सूखा घिया, हरे तेलवाली एक शीशी, एक विचित्र लम्बी जड़ निकाली उन्हें देख तुन्गनाथ डर गया। जड़ देखकर तो उसे और भी डर लगा। वह न जान सका कि वह किस पेड़ की जड़ थी।

बूढ़े ने तश्तरी में घिये में से कोई चूरा निकालकर डाला फिर उसने जड़ में से कई गोल गोल टुकड़े काटे। एक गोले को लेकर उसने मोमबत्ती की लौ में जलाया—जलते उस गोले को तश्तरी के काले चूरे में डाला। तुरत तश्तरी में से हरी और नीले रंग की लपटें निकलने लगीं।

"एक" बूढ़े ने कहा।

जब तश्तरी में लपटें कम होने लगीं "दो" कहते हुए बूढ़े ने एक और गोला तश्तरी में डाल दिया। फिर लपटें उठीं इस प्रकार उसने चार पाँच गोले एक के बाद एक डाले। "क्या यह काम कर सकोगे!" उसने तुन्गनाथ से पूछा।

"कर सकता हूँ, बाबा।" तुन्गनाथ ने कहा।

बूढ़े ने जड़ में से कुछ और गोल गोल टुकड़े काटे। "एक एक ही आग में डालना। जब एक जलकर खतम होने लगे तब दूसरा डालना। जब गोला जल रहा हो, तो ज़ोर से एक से दस तक गिनो। इस बीच में चाहे कुछ भी दिखाई दे, मैं कुछ भी करूँ तुम ख्याल न करना। तुम अपना काम करते जाना। समझे?"

तुन्गनाथ ने सिर हिलाया। बूढ़े ने कहा—"मुझे ज़रा ओढ़ लेने दो, फिर उसके बाद शुरु करना...." उसने छड़ी एक तरफ़ रख दी। शीशी का तेल कुछ पिया, कम्बल सिर पर डालकर मन्त्र पढ़ने लगा।

थोड़ी देर बाद तुन्गनाथ ने जो सिर उठाकर देखा, तो बाबा न था। बाबा के कपड़े और कम्बल ज़मीन पर पड़े थे। उसके नीचे से एक हरा साँप बाहर आया। तुन्ग ज़ोर से चिल्लाया और उठकर दूर भाग गया।

"तुन्ग, यहाँ आओ।" उसे बाबा की आवाज़ सुनाई दी।

तुन्ग डरता, फिर पहिली जगह पर आ गया। बूढ़े ने उसे बुरी तरह डाँटा फटकारा—"मैंने तुमसे क्या कहा था? मैंने कहा था कि चाहे कुछ भी देखो, मैं कुछ भी करूँ, तुम ख्याल न करना और तुमने यह क्या किया?"

"परन्तु तुम्हें पहिले ही मुझे बताना चाहिए था कि इस तरह होगा—बाबा, हाँ, तो देखना।" तुन्गनाथ ने कहा।

उसने जो कहा था, वैसा ही किया। दस गोले लेकर, वह आग में डालता गया और एक आँख से यह भी देखता गया

लाने से काम नहीं चलेगा। जो कुछ लाओ, उसका अधिक हिस्सा हमें देना होगा। तुम बूढ़े हो—हो सकता है, तुम्हें सोने की ज़रूरत न हो, हम अभी छोटे हैं, हमें धन की बड़ी ज़रूरत है।" शोभा ने कहा।

अगले दिन तीनों मिलकर, गुफ़ा में गये। बूढ़े ने जड़ में से दस गोले काटे। शोभा ने और अधिक काटने लिए कहा। उसने कहा कि वह मन्त्र, दस टुकड़े के जलने तक ही काम आता है। यही बात है, हम दोनों को साँप बनाकर भेजो। साँप में बदल देनेवाला मन्त्र मैं जानती हूँ।" शोभा ने कहा। बूढ़ा मान गया।

बूढ़ा गोले एक-एक करके जला रहा था कि पति-पत्नी दोनों साँप बन गये। छेद में से सोने के सिक्के लाकर, उन्होंने उनका ढेर बना दिया। जब दसवाँ गोल जल गया, तो बड़ा-सा ढेर भी बन गया। परन्तु साँप फिर से आदमी नहीं बने।

बूढ़े ने साँपों को देखकर कहा—"तुम्हें फिर आदमी हो जाने का मन्त्र नहीं आता। जल्दबाज़ी की, यह मन्त्र तुम जैसे लोगों को नहीं मालूम होना चाहिए। यह सच है कि मैं अब सोना नहीं कमा सकता, पर यह सोना मेरी ज़िन्दगी-भर के लिए काफ़ी है। तुम जंगल में साँप बनकर, घूमते-फिरते अपनी ज़िन्दगी बसर करो।" यह कहकर वह चला गया।

दोनों साँपों ने एक दूसरे को देखा। गुफ़ा से बाहर आकर, जंगल में चले गये।

मरा हुआ दुल्हा

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। पेड़ पर से शव उतारकर कन्धे पर डाल, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा— "राजा, तुम इस आधी रात के समय यों कष्ट उठा रहे हो, पर क्या तुम जानते हो, जो फल तुमको मिलना चाहिए वह तुमसे हीन व्यक्ति को मिल सकता है। इसके दृष्टान्त के रूप में तुम्हें कुमारवर्मा की कहानी सुनाता हूँ—ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

कुमारवर्मा अवन्ती नगर का था। होने को तो उसका बड़ा वंश था। परन्तु उसके माँ-बाप ने ऐश्वर्य से जीने के लिए, दानी कहलाने के लिए जो कुछ धन-सम्पत्ति थी, वह सब खर्च दी या दे दी। इसलिए

कुमारवर्मा के पिता ने लड़के की शादी एक रईस घराने में करने की ठानी। एक करोड़पति की अत्यन्त कुरूपी लड़की को वह बहू बनाने के लिए मान गया।

परन्तु कुमारवर्मा धन का लालची न था। वह जीवन में असाधारण अनुभव पाकर मनुष्य की तरह जीना चाहता था। इसलिए उसने पैसे के लिए कुरूपी स्त्री से विवाह करने से इनकार कर दिया। बाप-बेटे में झगड़ा हुआ। आखिर, पिता ने कुमारवर्मा को घर से निकाल दिया। कुमारवर्मा इस पर दुखी न हुआ। संसार विशाल है। धैर्य-साहस हो तो संसार में कितने ही अनुभव होते हैं। वह नये नये अनुभव पाने के लिए घर छोड़कर निकल पड़ा।

कुमारवर्मा कुछ दिन उज्जयिनी में रहा, फिर वह अमरावती नगर के लिए निकल पड़ा। उसी दिन उज्जयिनी नगर के एक व्यापारी का, धनगुप्त नाम का लड़का भी अमरावती की ओर निकला।

उज्जयिनी नगर से निकलते ही दोनों मिले। दोनों घोड़ों पर सवार थे। धनगुप्त हमेशा पिता की तरह व्यापार में व्यस्त रहता। सिवाय अपने व्यापार और नगर के वह कुछ न जानता था। वह अजनबियों से परिचय पाना बिल्कुल न जानता था। परन्तु कुमारवर्मा परिचय करने कराने में बड़ा प्रवीण था। इसलिए जल्दी ही दोनों की दोस्ती हो गई। कुमारवर्मा बातों बातों में जान गया कि धनगुप्त किस काम पर निकला था।

एक तरह से धनगुप्त, कुमारवर्मा से बिल्कुल उल्टा था। उसके पिता ने धन के लालच में अमरावती नगर के एक करोड़पति

की लड़की से विवाह निश्चित किया था। वर-बधु पक्ष ने पत्र व्यवहार करके आवश्यक जानकारी जमा कर ली थी। तय हुआ कि दुल्हिन अपने घर से इतने लाख लाये। दुल्हे और दुल्हिन के एक बार मिल जाने पर, सगाई के बाद विवाह का मुहूर्त तय करना था। इसलिए धनगुप्त अपने होनेवाले ससुरालवाले नगर जा रहा था।

यह सुन कुमारवर्मा ने चकित होकर कहा—"ठीक है कि लड़की बहुत-सा धन ला रही है। परन्तु यदि वह सुन्दर न हो तो कैसे शादी करोगे! जब तक जीवित रहोगे, कैसे उससे निभाओगे!"

"लड़की ठीक ही है....हाँ, थोड़ा बहुत नुक्स हो तो ऐसी कौन-सी बड़ी बात है। सब में सब कुछ तो नहीं होता है....बस, काम चलाना ही होता है।" धनगुप्त ने कहा।

धनगुप्त के लिए कुमारवर्मा का साथ रहना बड़ा फ़ायदेमन्द रहा। नई जगह पर अपने आप पूछ ताछ कर सब तरह की सुविधाओं की व्यवस्था कर लेना कुमारवर्मा खूब जानता था। यह धनगुप्त

न जानता था। जो किसी की परवाह न करता था, वह कुमारवर्मा के प्रति विनय दिखाता। कुमारवर्मा अच्छे पड़ाव भी जानता था।

वे दोनों कुछ दिनों की यात्रा के बाद अमरावती नगर पहुँचे। उतने बड़े शहर की धनगुप्त ने कभी कल्पना भी न की थी। परन्तु कुमारवर्मा उस नगर का कोना कोना जानता था।

"अन्धेरा होने जा रहा है। अब तुम अपने ससुराल को खोजते नहीं जा सकते। आज रात को किसी अच्छी सराय में आराम करो। कल सवेरे उठकर जाना।" कुमारवर्मा ने सलाह दी। धनगुप्त को जो शहर देखकर घबरा गया था, यह सलाह जँची। वह कुमारवर्मा के साथ बड़ी धर्मशाला में गया। वह सराय-सी न थी, कोई राजमहल जान पड़ता था।

कुमारवर्मा ने सराय के मालिक से कहा—"हम दोनों को अलग अलग कमरा चाहिए। यात्रा में इधर उधर का खाना खाया है, हमारे लिए आज मिठाइयों वाला खाना बनवाइये। पैसे की फ़िक्र न कीजिए।"

उस दिन धनगुप्त ने जो भोजन किया, वह सचमुच बड़ा बढ़िया था। उतना स्वादिष्ट भोजन उसने कभी न किया था। लोभी था—उसने खूब खाना खाया। रात को उसके पेट में दर्द हुआ। वह बहुत देर तक दर्द से तड़पता रहा, फिर दर्द के कारण चिल्लाने लगा। सराय के मालिक ने आकर देखा। उसने वैद्य को बुलवाया। वैद्य ने आकर धनगुप्त की परीक्षा की। उसने कहा कि उसके पेट में कोई व्याधि थी, खूब खाने के कारण खतरा हो गया था। यदि उसके कोई

बन्धु, सम्बन्धी हो तो उनको बुलाने के लिए सराय के मालिक के लिए कहा।

चूँकि वह दूर देश से आया था, इसलिए यह सोच कर उसका आसपास कोई सम्बन्धी न होगा, वह कुमारवर्मा को उठा लाया। धनगुप्त की हालत देखकर, कुमारवर्मा को बड़ी दया आयी।

"यदि मैं सवेरे तक ठीक न हो जाऊँ, तो मेरे बारे में माधवगुप्त को खबर पहुँचाना। मैंने उनको पहिले ही खबर भिजवायी है कि मैं आ रहा हूँ। मेरे लिए प्रतीक्षा कर रहे होंगे। वे ही हमारे घर खबर पहुँचा सकते हैं।" धनगुप्त ने कहा।

कुमारवर्मा ने यह करने के लिए वचन दिया। धनगुप्त ने सवेरा होनेसे पहिले ही प्राण छोड़ दिये। मध्यान्ह के समय उसके दहन संस्कार का प्रबन्ध करके, सवेरे होते ही कुमारवर्मा माधवगुप्त का घर खोजता निकला।

माधवगुप्त के कुटुम्बवालों ने सोचा कि कुमारवर्मा ही धनगुप्त था। उसे उन्होंने यह कहने का भी मौका न दिया कि वह धनगुप्त न था और वह उसकी मृत्यु की खबर देने आया था।

"कल सवेरे से हम तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे हैं।" माधवगुप्त ने कहा।

कुमारवर्मा ने उन सब का उत्साह देखकर निश्चय किया कि वह सच न बतायेगा। एक अपूर्व अनुभव, बिना सोचे उसको हो रहा था। इसलिए उसने यह दिखाया जैसे वह धनगुप्त ही हो। "कल मेरे आने तक अन्धेरा हो गया था। इसलिए मैं सराय में ठहरा।" उसने माधवगुप्त से कहा।

माधवगुप्त के बन्धुओं ने सोचा कि होनेवाला दामाद इतना सुन्दर और हट्टाकट्टा था कि कभी उन्होंने कल्पना भी न की थी। पर कुमारवर्मा ने देखा कि उनमें से एक युवक के मुँह पर कोप था।

यह युवक वज्रपाल था। वह माधवगुप्त का दूर का सम्बन्धी था। गरीब था। अमरावती राजा के यहाँ सैनिक का काम करके अपना पेट पाल रहा था। यदि वह गरीब न होता तो माधवगुप्त अपनी लड़की कल्याणी का उससे विवाह करता। परन्तु अपनी लड़की को धनवान के घर देने के उद्देश्य से वह बहुत दूर सम्बन्ध कर रहा था।

वज्रपाल ने कुमारवर्मा को एक तरफ़ ले जाकर कहा—"तुम्हारे पास तलवार भी है, क्या उसका उपयोग कर सकते हो?"

"यदि तुम देखना चाहो तो देख लो, परन्तु कब और कहाँ?" कुमारवर्मा ने पूछा।

"उस बाग में, भोजन के बाद।" वज्रपाल ने कहा।

"परन्तु तुम क्यों मुझसे चिढ़े हुए हो?" कुमारवर्मा ने कहा।

"यदि तुम मेरी बात जानते होते तो कल्याणी से विवाह करने अपना शहर छोड़कर इतनी दूर न आये होते।" वज्रपाल ने कहा।

उस समय माधवगुप्त ने वहाँ आकर कहा—"कुछ देर में भोजन होगा, इस बीच तुम और बेटी को बातें करनी हों तो, कर लेना अच्छा है। मध्यान्ह के बाद पुरोहित आयेगा, सगाई होगी—"

उसके बाद कुमारवर्मा के पास कल्याणी अकेली आयी। होनेवाले पति के सामने जो लज्जा, झिझक वगैरह दिखाई जाती है, उसने कुछ भी न दिखाई।

"मुझे नहीं मालूम था कि तुम इतनी सुन्दर हो...." कुमारवर्मा ने उससे कहा।

"आपको मेरे सौन्दर्य से क्या मतलब! आपने पहिले ही तय कर लिया है कि मुझे क्या क्या दहेज में लाना है।" कल्याणी ने कहा।

"यानि, हम दोनों में प्रेम की गुंजाईश ही नहीं है!" उसने पूछा।

"नहीं, बिल्कुल नहीं।" कल्याणी ने कहा।

भोजन हुआ, कुमारवर्मा को कहीं जाता देख माधवगुप्त ने कहा—"उधर न जाओ, दो चार मिनिट में पुरोहित आ जायेगा।"

"यहीं, ज़रा बाग में हो आऊँ...." कहता कुमारवर्मा चला गया, यह सोच कि बाग का फाटक खुला हुआ होगा, उससे वह चला जायेगा। परन्तु वज्रपाल उसके पीछे ही बाग में आया।

कुमारवर्मा ने पीछे मुड़कर जो देखा, तो वज्रपाल ने उपहास करते कहा— "क्यों, जान बचाकर भागना चाहते हो!"

"यह जानकर ही क्या फाटक पर ताला लगाया है!" कुमारवर्मा ने पूछा।

"मैं जानता हूँ, तुम डरपोक हो।" वज्रपाल ने कहा।

"इसी धैर्य में क्या मुझे तल्वार से लड़ने के लिए ललकारा था। कितने नीच हो, कितने डरपोक हो, तुम्हें नहीं छोड़ना चाहिए।" कुमारवर्मा ने कहा।

वज्रपाल तल्वार लेकर चिल्लाता कुमारवर्मा पर लपका। दोनों कुछ समय तक झगड़ते रहे। "मैं नहीं जानता था कि तुम इतने टँटपूँजिये वीर हो। यह लो, रोको।" यह कहकर कुमारवर्मा ने वज्रपाल के हाथ की तल्वार तोड़ दी और अपने हाथ में ले ली।

"मेरी तल्वार मुझे दे दो।" वज्रपाल ने कहा।

"तल्वार तुम्हें देने का मतलब है कि फिर युद्ध किया जाये। यह तुम्हारे लिए खतरनाक है। आइन्दा जो सचमुच ही डरपोक हों, उनसे युद्ध करना तुम्हारे लिए अच्छा है।" कहकर, कुमारवर्मा ने पीछे जो देखा, तो कल्याणी को पाया। वह पूछ रही थी—"क्या हुआ! क्या हुआ!"

वह जानती थी कि क्या हो रहा था। उसने सोचा था कि वह उसके प्रियतम के हाथ मारा जायेगा। यह देख कुमारवर्मा ने वज्रपाल की तल्वार उसके हाथ में

देते हुए कहा—"इसे ज़रा होशियारी से देखना। नहीं तो, यह तलवार दूसरों के प्राण लेने की बात तो दूर, कहीं उसके ही प्राण न ले बैठे।" वह यह कहकर चला गया। उसने माधवगुप्त की ओर देखकर कहा—"मैं जिस काम पर आया था, वह हो गया है। अब मुझे जाने दीजिये।"

माधवगुप्त ने आश्चर्य से पूछा—"यह क्या? एक और मिनिट में पुरोहित घर आयेगा। सगाई के बाद, मुहूर्त निश्चित कर देगा।"

"हाँ, ठीक है। मगर मुझे और भी ज़रूरी काम है—एक और मिनिट में मेरा दहन कर देंगे।" कुमारवर्मा ने कहा।

माधवगुप्त को समझ में न आया कि यह भी क्या मज़ाक था—"क्यों, यूँ ऊँटपटांग बातें करते हो!"

"ऊँटपटांग बातें नहीं, जो कुछ मैं कह रहा हूँ, ठीक कह रहा हूँ। मैं सोच्चा हूँ। रात में मुझे अच्छा खाना दिया गया, खूब खा लिया। मेरे पेट में फोड़ा था, वह मेरे प्राण ही ले बैठा। मैं सवेरे मर गया। थोड़ी और देर में मेरा दहन संस्कार हो जायेगा। मेरे बगैर कैसे यह होगा!" कुमारवर्मा ने कहा।

सब अचरज में देख रहे थे कि कुमारवर्मा चला गया। फिर माधवगुप्त ने जब नौकर को भेजकर पूछताछ करवायी—तो पता लगा कि पिछली रात ही सराय में धनगुप्त मर गया था। दुपहर को उसका दहन संस्कार हुआ था।

माधवगुप्त के परिवारवालों ने सोचा कि शायद उन्होंने धनगुप्त का प्रेत ही देखा था।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। कल्याणी

धनगुप्त को नहीं चाहती थी, यह सच है। इसका कारण यह था कि वह उसके धन के लिए विवाह करना चाहता था। यह कुमारवर्मा भी जानता था। यह भी सच है कि यदि वह प्रेम करती, तो वह उससे विवाह कर लेता। उस हालत में क्यों नहीं उसने उसको यह बताकर कि वह कौन था, उसका प्रेम पाया और धनगुप्त प्रेत की तरह अभिनय करके चला गया—इसका क्या कारण था? यदि तुमने इस सन्देह का जान-बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"कुमारवर्मा ने यदि यथार्थ नहीं बताया था, तो इसका एक कारण नहीं, तीन कारण थे। पहिला कुमारवर्मा धनी न था। कल्याणी सोच सकती थी कि वह भी उसे धन के लिए प्रेम कर रहा था। सच है कि उसने भी एक गरीब से प्रेम किया था। वज्रपाल, उसे इतना हीन लगा कि कल्याणी के प्रेम के लिए, उससे होड़ करना, उसे अच्छा न लगा। अपमान-सा लगा। यह दूसरा कारण था। एक और कारण भी है—यदि यह मालूम हो जाता कि वह मामूली आदमी है और वह वज्रपाल को हरा देता, तो सम्भव था कि कल्याणी उसे ठुकरा देती। पर जब वह समझेगी कि वह प्रेत था, तो उसे वह क्षमा कर देगी और वह उससे विवाह कर सकेगी। यह सब सोचकर, कुमारवर्मा ने प्रेत की तरह अभिनय किया।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर आ बैठा। [कल्पित]

गरीब के घर शादी

एक बार पन्नालाल काम पर कस्बे के लिए निकला। रास्ते में एक छोटी-सी नहर थी। वह नहर में उतर रहा था कि उसके पैर में कोई पोटली-सी लगी। उसने खोलकर जो उसे देखा तो उसमें मोहरें थीं। उसे किसी ने फेंक दिया होगा। वह किसकी है, कस्बे में जरूर मालूम हो जायेगा।

वह जिस काम पर आया था, वह जल्दी ही खतम हो गया। पन्नालाल को कहीं न सुनाई दिया कि किसीकी मोहरें खो गयी थीं। वह घर जाने के लिए वापिस आ रहा था। उसे प्यास लगी। पानी माँगने के लिए वह एक घर में घुसा ही था कि उसने सुना—"जो विष यों आप खाने जा रहे हैं, हमें देकर, फिर खाइये।" घरवाली रोती-रोती कह रही थी। यह सुनते ही पन्नालाल अन्दर गया। वह अपनी प्यास ही भूल गया। "नहीं, नहीं, ऐसा न कीजिये। क्या मुसीबत आ पड़ी है आप पर....!"

उस घरवाले की तीन लड़कियाँ थीं। दो की तो शादी की उम्र भी हो गई थी। तीनों की शादी करनी थी। जब तक कम से कम एक सौ मोहरें दहेज में न दी जायेंगी, तो कोई विवाह करने न आयेगा। जिसके पास शादी के लिए ही पैसा न हो। वह दहेज के लिए कहाँ से लायेगा? बिना शादी किये भी कितने दिन बितायेगा? यह उस घरवाले की समस्या थी।

"खर्च की फिक्र न कीजिये। यह मोहरोंवाली पोटली लेकर आप अपनी तीनों

लड़कियों की शादी कीजिये।" पन्नालाल ने कहा। उसने सोचा कि वह पोटली शायद इन्ही लोगों के लिए मिली होगी। घरवाली ने बड़ी खुशी से पूछा—"कौन हैं आप? परोपकारी पन्नालाल की तरह प्रत्यक्ष हो गये हो!"

"हाँ, हाँ, मैं पन्नालाल ही हूँ।" कहकर पन्नालाल उनसे विदा लेकर, अपने गाँव चला गया।

घरवाला भी, जिन दामादों को उसने चुन रखा था, उनको पैसा देकर, मुहूर्त निश्चित करवाने के लिए, पैसा लेकर निकल पड़ा।

पन्नालाल जब उस नहर के पास आया, जिस में उसे मोहरों की पोटली दिखाई दी थी, वहाँ उसे किसी का कराहना सुनाई दिया जब उसने इधर उधर खोजा, तो उसे एक आदमी दिखाई दिया। उसे चोट लगी हुई थी। बेहोश-सा पड़ा था। पन्नालाल उसको नहर के पास ले गया। पानी पिलाया। "मैं कस्बा जा रहा था कि दुश्मनों ने मुझ पर हमला करके मेरी हत्या करनी चाही" उस आदमी ने यह भी कहा कि उसका घर पाँच छः कोस दूर था। पन्नालाल उसको अपने घर ले गया। वैद्य को बुलाकर उसकी चिकित्सा करवाई।

उस आदमी ने पन्नालाल से सच न कहा था। सवेरे एक साहुकार कस्बे में जो कुछ वसूलना था उसे वसूलकर चार पाँच मोहरों की थैलियाँ लेकर नौकरों के साथ आ रहा था कि तीन चोरों ने पत्थरों के पीछे से उन पर हमला किया। साहुकार के साथ के नौकरों में एक ताकतवर था, उसने लाठी से एक चोर को खूब जोर से मारा और दोनों चोर चलते हुए। जिसको

में फरियाद की कि चोरों ने मोहरों की एक पोटली चुरा ली थी।

उसी दिन कोतवाल के पास कानों कान बात पहुँची कि एक गरीब एक ही दिन तीन लड़कियों की शादी करने की सोच रहा था। कोतवाल ने जब उसे बुलाकर पूछा, तो उसने कहा कि परोपकारी पन्नालाल ने उसे मोहरेंवाली एक पोटली दी थी और वह पोटली तब भी उसके पास थी। पोटली लाकर देखी गई, तो साहुकार की मुद्रा भी उस पर थी।

परोपकारी पन्नालाल का नाम कोतवाल ने सुन रखा था। अब उसे सन्देह हुआ कि पन्नालाल ने चोरी कर कराकर और उसे लोगों में बाँटकर कहीं परोपकारी नाम तो नहीं पाया था? उसने सिपाहियों को पन्नालाल के गाँव भेजकर उसे बुलवा भेजा।

चोट लगी थी वह चोर कुछ दूर पत्थरों में गया और वहाँ बेहोश गिर गया।

इस हो हल्ले में एक मुहरों की पोटली गिर गई और वह पन्नालाल को मिली। जब पन्नालाल वह पोटली उठा रहा था। तब उस आदमी को होश न था। जब वह कस्बे से वापिस आ रहा था, तो उसको कुछ होश आया और होश में दर्द के कारण कराह रहा था।

जब साहुकार ने घर जाकर देखा तो उसकी मोहरेंवाली पोटली गायब थी। वह कस्बे फिर वापिस गया और कोतवाली

चोरी के बारे में उसे कुछ न मालूम था। जो कुछ जैसा जैसा गुज़रा था, वैसे वैसे पन्नालाल ने साफ साफ कोतवाल से कह दिया।

ये बातें न कोतवाल को जँची, न साहुकार को ही। साहुकार की ५००

मोहरें किसी और की हो गई थीं। यह कहकर कि चोरी का माल पोलीस को न देकर, चूँकि उसने इस्तेमाल किया था, इस अपराध पर कोतवाल ने पन्नालाल को कैद में रख छोड़ा। जब तक साहुकार को उसकी मोहरें न मिल जायें, तब तक उसने उस घरवाले को भी कैद में रखना चाहा। पर पन्नालाल ने कहा कि उसको कैद में न रखा जाये, साहुकार को, उसके पैसे देने की जिम्मेवारी उसकी थी।

उसने घरवाले से कहा—"एक काम कीजिये। मेरी पत्नी को खबर भिजवाइये कि ५०० मोहरों के लिए मुझे कैद में डाल दिया गया है। हमारे घर में एक बीमार आदमी है, उससे कहिये कि उसे कोई दिक्कत न हो।"

वह घरवाला, पन्नालाल की हालत पर रोता, स्वयं मीनाक्षी के पास गया और उसे यह खबर दी। उस कराहते मनुष्य को देखकर उसने कहा—"पन्नालाल सचमुच मनुष्य नहीं हैं। वे देवता हैं। इतनी आफत में हैं, तब भी कह रहे हैं कि इस आदमी को किसी प्रकार की कमी न हो।"

मीनाक्षी ने सब सुनकर कहा—"अच्छा, आप जाकर, अपनी लड़कियों की शादी का इन्तज़ाम कीजिये। भगवान की अगर दया हो, तो क्या ५०० मोहरें नहीं मिल जायेंगी?"

घरवाले ने कहा—"पन्नालाल जी ने जो मुझे दिया था, उसका आधा अभी मेरे पास वैसा ही है। दहेज तो पहिले ही दे दिया है, शादी के लिए जब खर्च निकल आयेगा, तभी करूँगा। यदि हम दो सौ मोहरें कहीं से ले आये, तो पन्नालाल जी का छुटकारा हो जायेगा।"

"इस तरह की बात मन में भी न रखिये। वे अगर यह सुनेंगे, तो उनको बड़ा दर्द होगा। उन्होंने इतने लोगों की मदद की है, पर कभी अपनी बात न सोची।" मीनाक्षी ने कहा।

कराहते हुए चोर ने उस आदमी से कहा—"क्या आप गाड़ी का इन्तज़ाम करेंगे? मैं घर जाऊँगा। जिसने मेरी प्राण रक्षा की है, वह अब जेल में है, तो उसका अतिथि कैसे होकर रहा जाये?"

मीनाक्षी ने उससे प्रार्थना की कि वह न जाये।

"सब घावों की मरहमपट्टी करा ही दी है। अब आप भी क्या कर सकते हैं? मुझे जाने दीजिये।" चोर ने कहा।

मीनाक्षी और घरवाले ने मिलकर चोर को गाड़ी में लिटा दिया। चोर ने घरवाले को भी गाड़ी में बिठाया। गाड़ी चोरों के गाँव पहुँची। चोट खाये हुए चोर ने साथ के चोरों से कहकर, घरवाले को पाँच सौ मोहरें दिलवायीं। घरवाले ने उन्हें लाकर, साहुकार को दिया और पन्नालाल को कैद से छुड़ा दिया।

घरवाले को "आपने हमारा घर बचाया, हमारे प्राण बचाये...." कहता सुन, पन्नालाल ने कहा—"आपका उपकार सचमुच मैंने नहीं किया है—परन्तु उस चोट खाये हुए आदमी ने। उस तरह के आदमी के ही अधिक शत्रु होते हैं।" कहकर, यह आशीर्वाद देकर कि बच्चों की शादी धूमधाम से हो, वह घर वापिस चला गया। इतनी जल्दी अपने पति को घर वापिस आया देख, मीनाक्षी खुशी से आँसू बहाने लगी।

युद्धकाण्ड

सेतु के निर्माण के लिए राम के आज्ञा देते ही वानर लाखों की संख्या में, सागून के पेड़, अशोक वृक्ष, आम के पेड़ और भी कितने ही तरह के पेड़ ला लाकर समुद्र में डालने लगे। ताड़, नारियल, कीकर आदि के पेड़ भी लाकर उन्होंने फेंके। यन्त्रों की सहायता से हाथी जितने बड़े-बड़े पत्थर भी जमा किये। जब यों बड़े-बड़े पत्थर गिरते, तो समुद्र का पानी आकाश को चूमता।

ताकि पुल समान हो, इसलिए कई रस्सी लेकर, कई लकड़ियाँ लेकर, उसकी ऊँचाई निचाई को देखने लगा। इस तरह वानरों ने दस योजन चौड़े और सौ योजन ऊँचे पुल का निर्माण किया।

सेतु के निर्माण के लिए नल की सहायता करनेवाले जो वानर, पहाड़ से बड़े बड़े पत्थर ला रहे थे, उनको देखकर आश्चर्य होता था। उन्होंने पहिले दिन चौदह योजन, दूसरे दिन बीस योजन, तीसरे दिन इकीस योजन, चौथे दिन बाईस योजन, पाँचवें दिन तेईस योजन पुल बनाया। वे पाँचवें दिन सुवेल पर्वत पहुँचे। वानर करोड़ों की संख्या में, सेतु पर से चलकर, समुद्र के दक्षिण तट पर गये।

राम धनुष लेकर आगे चल रहे थे और पीछे-पीछे बानर सेना, सुग्रीव आदि सिंहनाद करते निकले।

इधर वानर सेना के कूच करते ही उधर लंका से भेरि, मृदंग आदि की भयंकर ध्वनियाँ सुनाई पड़ने लगीं। उसे सुन बानरों ने और भी भयंकर निनाद किया। इस ध्वनि को लंका में राक्षसों ने सुना। तरह-तरह के ध्वजाओं को, पताकाओं को लंका में फहराते देख, राम ने "यहीं न सीता, हरिण की तरह रावण की कैद में है!" मन ही मन सोचकर लक्ष्मण से कहा—"इस त्रिकूट पर्वत पर विश्वकर्मा की बनाई हुई लंका को देखो! इसमें इतने बड़े-बड़े मकान हैं कि वे आकाश में बादल के टुकड़े से जान पड़ते हैं। सुन्दर वन हैं। तरह तरह के पक्षियों के चहचहाने के कारण यह कितना ही आनन्ददायक मालूम हो रहा है।"

फिर राम ने वानर सेना को गरुड़ व्यूह में व्यवस्थित किया। उसके सामने राम और लक्ष्मण स्वयं थे। अंगद और नील अपनी अपनी सेना के साथ हृदय के स्थल पर, भूषण अपनी सेना के साथ दायीं तरफ़

विभीषण एक गदा लेकर, अपने मन्त्रियों के साथ खड़ा हो गया, ताकि यदि कोई शत्रु आये, तो उसे मार दे।

राम और लक्ष्मण को हनुमान और अंगद अपने कन्धों पर बिठाकर, समुद्र के पार ले गये। वहाँ राम का अलग-अलग सबने अभिषेक किया। उन्होंने आशीर्वाद दिया कि वे शत्रुओं का संहार करके चिरकाल तक संसार में सुखपूर्वक रहें।

राम ने लक्ष्मण से कहा—"हमें देरी नहीं करनी चाहिए, तुरत लंका के लिए निकल पड़ना चाहिए।"

गन्धपादन बायीं तरफ़ जाम्बवन्त सुक्षेपण, वेगदशी, पेट के स्थान में और सुग्रीव को पीछे रहने के लिए कहा गया।

व्यूह के पूर्ण होते ही राम की आज्ञा पर सुग्रीव ने शुक को छोड़ दिया। वह वहाँ एक क्षण भी न रहा और रावण के पास चला गया। रावण ने उसे देखकर हँसते हुए कहा—"किसी ने तुम्हारे पंख काट दिये हैं! कहीं तुम बन्दरों के हाथ तो नहीं आ गये थे!"

"मैं समुद्र पार करके गया। सुग्रीव को देखा, जैसे आपने बताया था, वैसे ही मैंने उससे कहा। वे वानर मुझे देखकर बिगड़े। आकाश में उछलकर, मुझे पकड़ लिया और तरह तरह से मुझे नोंचने खरोंचने लगे। वे बड़े गुसैल हैं। खूँखार भी। उनसे तो बात करना ही मुश्किल है। जवाब दिलवाना तो और भी कठिन है। राम लंका द्वीप में पहुँच गया है। समुद्र पर पुल बनवाकर, लंका के द्वार तक आ गया है। असंख्य वानर सेना उसके साथ है। या तो सीता को तुरत वापिस दे दो, नहीं तो युद्ध के लिए तैय्यार हो जाओ।" शुक ने कहा।

रावण ने शुक से कहा कि उसने युद्ध के लिए ही निर्णय कर लिया था। उसने वानर सेना के विवरण जानने के लिए शुक और सारण को भेजा। वे वानर रूप धारण करके वानर सेना में प्रविष्ट हो गये।

वे वानर सेना का अन्त न जान सके। पर्वत के शिखरों पर, पर्वतों के बीच, जंगलों में, समुद्र तट पर, वनों में, उद्यानों में—जहाँ देखो, वहीं वानर सेना थी। उस सेना का एक भाग, अभी पुल को पार कर रहा था।

क्योंकि वे निरायुध थे, इसलिए राम ने उनको वचन दिया कि वे उनको मारेंगे भी नहीं।

उन्होंने रावण से अपनी बात यों कहने के लिए कहा—"जो दुस्साहस तुमने मेरी पत्नी सीता को उठा ले जाने में दिखाया था, वह अब दिखाओ। कल सवेरा होते ही लंका के प्राकार, द्वार और तुम्हारी राक्षस सेना को अपने बाणों से भस्म कर देनेवाला हूँ—खबरदार।"

शुक और सारण ने राम की प्रशंसा करके, लंका वापिस जाकर, रावण से कहा—"राजा, हमारे वानर सेना में प्रविष्ट होते ही विभीषण ने हमें पकड़ लिया, परन्तु राम ने हमें छुड़वा दिया। वानर सेना में राम, लक्ष्मण और विभीषण, सुग्रीव ही काफ़ी हैं। ये पराक्रम में इन्द्र से कम नहीं है। लंका को समाप्त करने के लिए वे चार ही काफ़ी हैं। बाकी वानर सेना अनावश्यक मालूम होती है। राम का रूप और आयुध देखकर, लगता है, वह अकेला ही काफ़ी है। लक्ष्मण, विभीषण और सुग्रीव की भी क्या ज़रूरत है! और वानरों में इतना उत्साह है कि वे इस

इतने में विभीषण ने शुक सारण के रूपों को पहिचान लिया। उनको पकड़कर राम से कहा—"ये शुक और सारण हैं। रावण के मन्त्री हैं। हमारे रहस्यों को जानने के लिए लंका से आये हैं।"

शुक और सारण ने स्वीकार कर लिया कि रावण ने उनको वानर सेना का विवरण जानने के लिए भेजा था।

राम ने हँसकर उनसे कहा—"अब और क्या है? सारी सेना देख लो। हमें देख लो। जो कुछ देखना-दाखना है, उसे देख-दाखकर, लंका को वापिस चले जाओ।"

इन्तज़ार में है कि कब युद्ध शुरु होता है। इसलिए उनसे युद्ध करने की अपेक्षा यही अच्छा है कि सीता उनको सौंप दी जाये!"

यह सुन रावण ने सारण से कहा—"यदि सारे लोक मिलकर भी मुझ पर आक्रमण करने आयें, तो भी मैं सीता को नहीं छोड़ूँगा। तुम चूँकि डरपोक हो, इसलिए बन्दरों की चोट खाकर सीता को छोड़ने के लिए कह रहे हो।" कहकर शुक और सारण को साथ लेकर बर्फीले पहाड़ की तरह सफ़ेद अपने महल के ऊपर गया। वहाँ से उसने देखा कि पर्वत और वनों में सभी जगह वानर सेना भरी हुई थी।

उसने सारण की ओर मुड़कर कहा—"वानरों में शूर, बलवान कौन है? कौन उनका नायक है? उनमें मुख्य कौन है?"

"लंका की ओर मुड़कर जो सिंहनाद कर रहा है, वह वानर नील है और वानरों का सेनापति हाथ ऊपर करके, खड़ा, मुँह को ज़मीन की ओर किये अंगद है। सुग्रीव द्वारा यह युवराजा के रूप में अभिषिक्त भी हो चुका है। बाली का लड़का है। हनुमान तो लंका को देखकर गया ही है। अंगद के पीछे नल है। उसने ही समुद्र पर पुल बनाया है। वह अकेला लंका को जीतना चाहता है। सैनिकों को ठीक खड़ा करता जो सफेद वानर दिखाई देता है, वह ही श्वेत है। और वह कुमुद है। बड़ा क्रोधी और भयंकर है। वह वानर रम्भ है। और जो वह अंगड़ाइयाँ ले रहा है, वह शरभ है। उसे मर जाने की परवाह नहीं है। युद्ध में वह कभी पीछे कदम नहीं उठायेगा—" कहकर सारण ने, रावण को एक एक वानर सरदार का परिचय कराया।
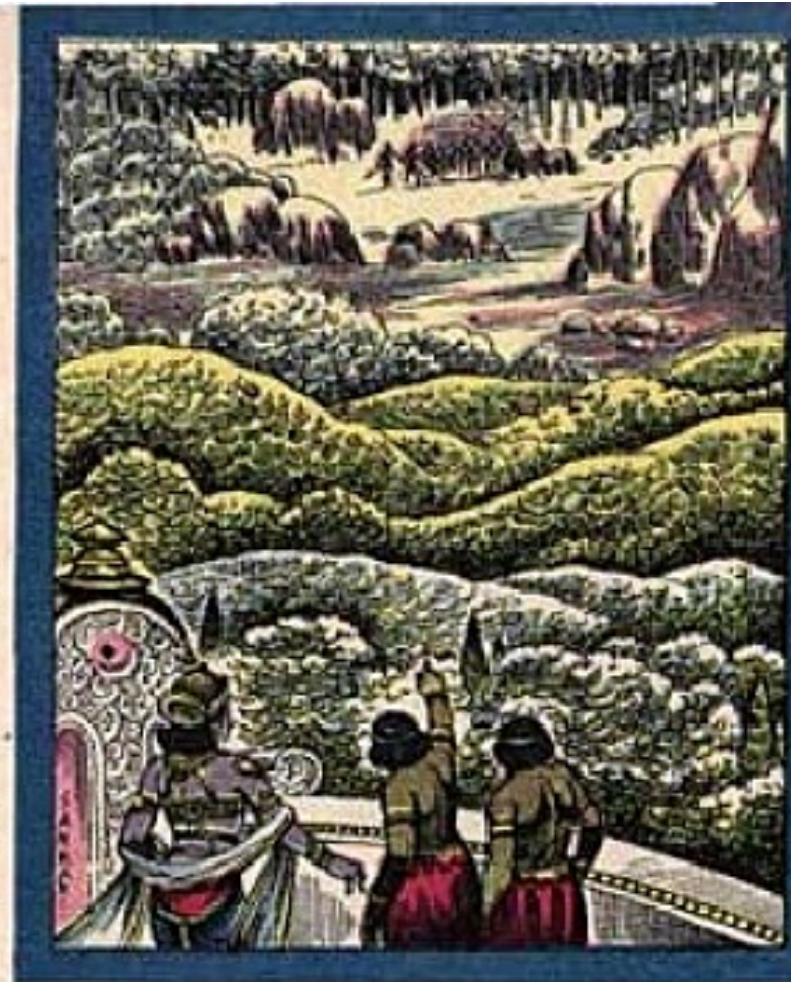
सारण के बाद शुक ने कुछ और शत्रु नायकों के बारे में और उनकी बहादुरी के बारे में बताया।

रावण को, अपने मन्त्रियों को, शत्रुओं की यूँ प्रशंसा करता सुन, गुस्सा आ गया। उसने उनसे कहा—"मेरा नमक खाते हो और मुझसे ही यूँ अप्रिय बातें करते हो! और जब कि युद्ध शुरु होनेवाला है क्या यूँ शत्रुओं की प्रशंसा की जाती है! बड़ों से तुमने क्या सीखा है! जो नीतिशास्त्र तुमने पढ़ा है, क्या वह यही है! तुम्हें तो मार देना चाहिए था, पर जो कुछ तुमने पहिले किया था, उसका लिहाज करके तुम्हें छोड़ देता हूँ। वह ही मृत्यु के समान है!"

यह सुन शुक और सारण शर्मिन्दा हुए और रावण का जय जयकार करके चले गये।

रावण ने महोदर को भेजकर, गुप्तचरों को बुलवाकर उनसे कहा—"तुम राम के पास जाओ। मालूम करो कि वह क्या कर रहा है! उसके कौन अच्छे मित्र हैं!" मालूम करो कि वह कब सोता है, कब उठता है। क्या करता है! जो जानकारी तुम लाओगे, उससे हमें युद्ध में जीतने में मदद मिलेगी।

ये गुप्तचर शार्दूल को साथ लेकर, वेष बदलकर सुवेल पर्वत के पास राम-लक्ष्मण और विभीषण के समीप गये। राम-लक्ष्मण और वानर सेना को देखकर ये भयभीत हो उठे।

विभीषण ने उन्हें पहिचान भी लिया। उनमें शार्दूल बड़ा दुष्ट था। विभीषण ने गुप्तचरों को पकड़कर शार्दूल को वानरों को सौंप दिया। वानर उसे मारने जा रहे थे कि राम ने उन्हें रोककर शार्दूल और
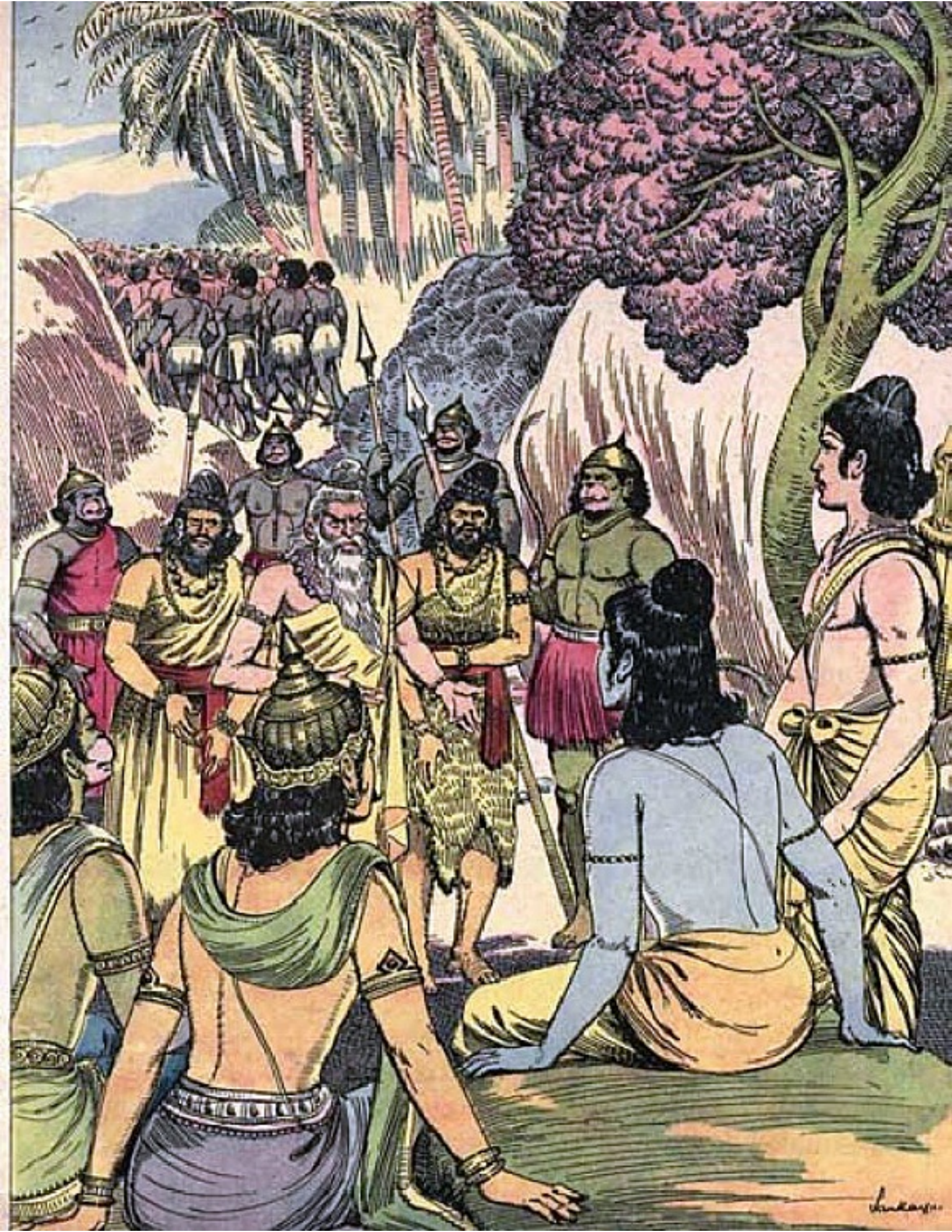
शेष गुप्तचरों को भी छुड़वा दिया। वे लंका वापिस गये। उन्होंने रावण से कहा कि राम सेना के साथ सुवेल पर्वत के पास थे।

रावण ने शार्दूल को देखकर कहा—"तुम्हारा चेहरा यूँ क्यों उतरा हुआ है? शत्रुओं ने तुम्हारा तो कुछ नहीं बिगाड़ा है?"

शार्दूल ने रावण से कहा—"उन बानरों के बारे में कुछ भी मालूम करना बड़ा कठिन है। मैं अभी बानर सेना में घुसा ही था कि मैं पकड़ लिया गया। विभीषण के मन्त्रियों ने मुझे मारा, फिर बानरों ने खूब मुझे मारा पीटा, मैं बेहोश पड़ा था, मरने को था कि राम ने आकर मेरी रक्षा की। उसने कहा है कि वह जल्दी लंका को नहीं घेरेगा, सीता को दे दो, नहीं तो युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।"

रावण ने शार्दूल से बानर प्रमुखों के बारे में कहलाया। अपने मन्त्रियों को बुलाकर जो कुछ करना था, उसके बारे में सोचा विचारा। उसने कुछ निर्णय करके मन्त्रियों को भेज दिया। मायावी विद्युज्जिह्व को साथ लेकर, सीता के पास गया।

उसने विद्युज्जिह्व से कहा—"हमें माया से, सीता को धोखा देना है। तुम राम का सिर तैयार करो। धनुष-बाण आदि भी हों। उसे लेकर मेरे साथ आओ।"

विद्युज्जिह्व इसके लिए मान गया। रावण के दिये हुए ईनाम आदि को लेकर वह चला गया। रावण अशोक वन में राक्षस स्त्रियों के बीच बैठी सीता के पास गया।

ध्रुव
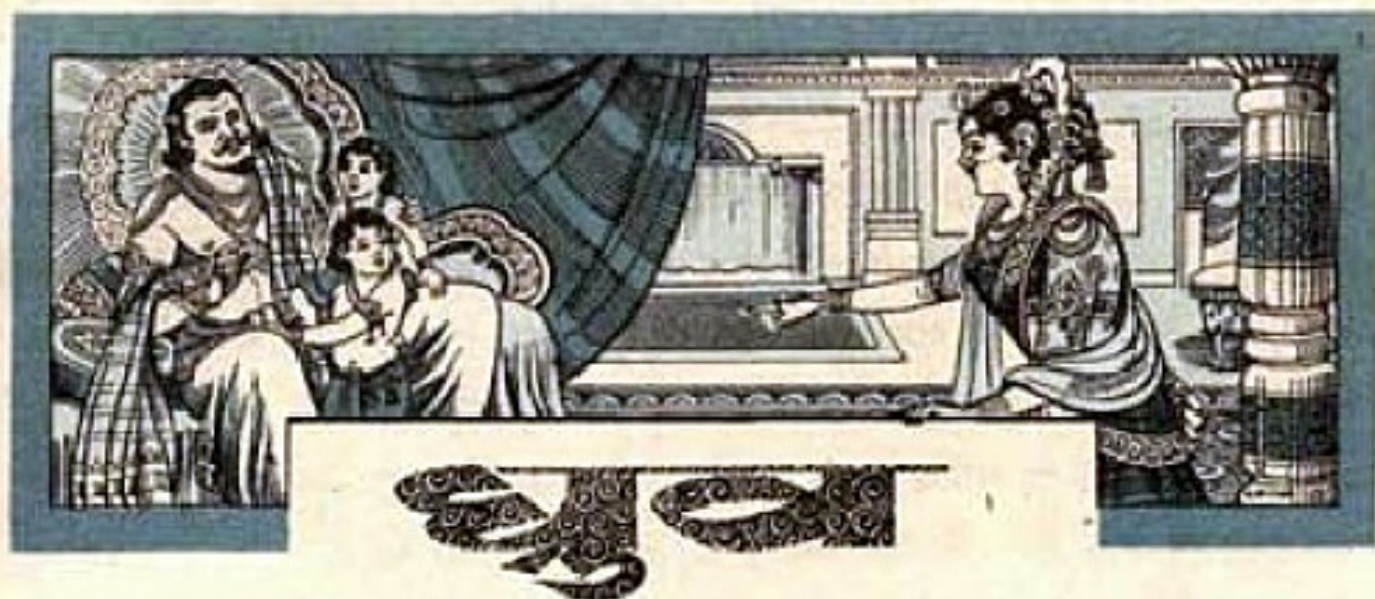
मनुओं में प्रथम स्वयंभू और उसकी पत्नी शतरूपक के प्रियव्रत और उत्तानपाद दो पुत्र पैदा हुये। उनमें उत्तानपाद के सुनीति और सुरुचि नाम की दो पत्नियाँ थीं। सुनीति के ध्रुव, और सुरुचि के उत्तम दो लड़के हुए।

उत्तानपाद को अपनी छोटी पत्नी सुरिचि पर अधिक प्रेम था। इसलिए वह अपनी बड़ी पत्नी की परवाह न करता और छोटी पत्नी के वश में रहता।

एक बार जब उत्तानपाद, अपनी छोटी पत्नी के लड़के उत्तम को गोदी में बिठाकर दुलार पुचकार रहा था, तो ध्रुव वहाँ भागा भागा आया। उसने भी पिता की गोदी में बैठना चाहा। उत्तानपाद ने ध्रुव को रोका।

यह देख सुरुचि ने ध्रुव की ओर उपेक्षा की। उसने कहा—"अरे जो, पिता की गोदी में न बैठ सका। वह कल पिता के सिंहासन पर कैसे बैठेगा! छोटे हो पर अपना लालच दिखा दिया। राज्य चाहते हो, तो तपस्या करके मेरे पेट में पैदा होते, समझे।"

सौतेली माँ के यह कहने पर ध्रुव को बड़ा गुस्सा आया। उसे यों कहता और पिता को चुप देख, तो उसको दुख भी हुआ। वह रोता-रोता माँ के पास गया।

दुखी ध्रुव को, माँ ने पास बुलाया। उसको गोदी में बिठाया। पुचकारते हुए उसने उससे उसका दुख का कारण मालूम कर लिया। सौत की बात पर सोचकर उसका दुख भी बे-काबू हो गया।

उसने अपने लड़के से कहा—"जब हमें कष्ट हों, तो दूसरों की निन्दा करना गलत है। पूर्वजन्म में किसी को कष्ट देकर, हम इस जन्म में कष्ट भोगते हैं। जब तुम्हारे पिता को मुझे पत्नी कहने में ही लज्जा होती है, तो सुरुचि के यह कहने में गलती ही क्या है? मैं अभागिन हूँ। और तुम मेरे लड़के हो, तुम्हारे पिता को तुम पर क्यों प्रेम होगा? यदि तुम राज्य ही चाहते हो, तो सुरुचि के कहे अनुसार तपस्या करो। सब कष्ट वे विष्णु ही हटा देंगे।"

माँ के यह कहने पर ध्रुव ने निश्चय कर लिया और वह तपस्या के लिये निकल पड़ा।

उसको नारद मिले। उसने आश्चर्य से पूछा—"अरे, तुम में अभी इतना रोष! तुम्हारी सौतेली माँ ने कुछ कह दिया, इसलिए तुम घर छोड़कर जा रहे हो? कहाँ जा रहे हो?"

"मुनीन्द्र, माँ सुरुचि ने जो कहा है, उससे मेरे मन में बड़ा घाव लगा है।" ध्रुव ने कहा।

"इस उम्र में मान और अपमान नहीं समझ में आते हैं। माँ की बात सुनकर तुम

विष्णु की तपस्या करने निकले हो। कई जन्मों में तपस्या करने के बाद भी कई विष्णु का साक्षात्कार नहीं कर पाते हैं। इसलिए यह प्रयत्न अभी छोड़ दो। अच्छे समय के आने पर देखा जायेगा।" नारद ने कहा।

"स्वामी! सुरुचि की बातें मुझे बाणों की तरह चुभ रहीं हैं। आपकी बातें मेरे दिमाग में नहीं आ रही हैं। साक्षात्कार करने के लिए मुझे कोई आसान मार्ग बताइये।" ध्रुव ने कहा।

ध्रुव की निश्चल बुद्धि की प्रशंसा करके, नारद ने कहा—"बेटा, यमुना के किनारे के मधुवन में जाओ, कालिन्दी के जल में स्नान करके, द्वादशाक्षर मन्त्र का पाठ करते, एकाग्र चित्त हो, हरि का ध्यान करो। विष्णु खुश होकर, तुम्हारी इच्छा पूरी कर देंगे।"

ध्रुव तपस्या के लिए निकल पड़ा। नारद ने उत्तानपाद के पास आकर, उसका आतिथ्य स्वीकार करके कहा—"राजा, क्यों यों दुखी हो! धर्मार्थ, काम की हानि तो नहीं हुई है!"

"मुनीन्द्र, मेरा लड़का पाँच वर्ष का है। स्त्रियों की निर्दयता के कारण, माँ के

साथ चला गया है। जंगल में न मालूम कौन-सा जानवर उसे खा लेगा! उसने मेरी गोदी में बैठना चाहा और मैंने उसे स्त्री के वश में आकर भेज दिया।" उत्तानपाद ने कहा।

इस पर नारद ने कहा—उसके बारे में दुखी न होओ। उसे भगवान की रक्षा प्राप्त है। वह एक महान कार्य करके यशस्वी होकर जल्दी ही वापिस आ जायेगा। निश्चिन्त रहो।" नारद यह कहकर चले गये।

उत्तानपाद लोकसंचारी नारद की बात पर विश्वास करके, राज्य कार्य की उपेक्षा करता-सा हमेशा लड़के के बारे में सोचता रहता।

उधर ध्रुव मधुवन पहुँचा। कालिन्दी में स्नान करके, उस रात उपवास करके, योग करके हरि के ध्यान में मग्न हो गया। उसने पहिले महीने तीन दिन बाद फल खाये। दूसरे महीने में छः दिन बाद पत्ते खाये। तीसरे महीने नवें दिन एक बार पानी दिया। चौथे महीने श्वास रोक कर, बारह रोज में एक बार वायुभक्षण किया। पाँचवें महीने श्वास पूरी तरह रोक कर एक पैर पर खड़े होकर निश्चल हो भगवान का ध्यान करने लगा।

ध्रुव की तपस्या के कारण तीनों लोक काँप उठे। यह देख दिग्पालक भागे भागे विष्णु के पास गये।

"उत्तानपाद के लड़के की तपस्या के कारण लोक कम्पित हो उठे हैं।" "तुम डरो मत। मैं उसकी तपस्या छुड़ा दूँगा।" यह आश्वासन देकर विष्णु ने उन्हें भेज दिया। [अभी है]

३४. येसिमेट घाटी

कालिफोर्निया के येसिमेट नेशनल पार्क में (११०० वर्ग मील) में यह घाटी है। इसका विस्तार ८ वर्ग मील है। मैसेर्ड नदी के कारण यह घाटी बनी है कहीं कहीं इसकी गहराई ३००० फीट है। इस घाटी में बहुत से जलप्रपात हैं। सब प्रपातों को मिलाया जाय, तो छः मील बनते हैं। इनमें येसिमेट का प्रपात ही १४३० फीट है। संसार के बड़े जलप्रपातों में वह एक है।

इस पार्क में "मारिपोसा" एक बाग है। इसमें सिकोयिया पेड़ हैं। वे बहुत बड़े हैं। बहुत पुराने हैं। इस चित्र में जो वृक्ष दिखाये गये हैं उनकी आयु करीब चार हजार वर्ष है। यानि बुद्ध के पैदा होने के समय ही, ये १३०० वर्ष के थे। इसकी मुटाई ९६ १/२ फीट है। ऊँचाई २०९ फीट। "मारिपोसा" के सिकोयिया वृक्षों में यह ही सबसे पुराना वृक्ष है।

इस जाति के पेड़ों की सिकोयिया पार्क में अधिक संख्या में परवाह की जाती है। यह पार्क एक बड़ा जंगल है। यहाँ के पेड़ १९१६ से पूर्व लोगों की, अपनी निजी मिल्कियत थी। लाल रंग के इन पेड़ों को वे काटकर बेच दिया करते थे। सरकार ने इनको खरीदकर इनके कट जाने से रोक दिया।

Photo by Prasad
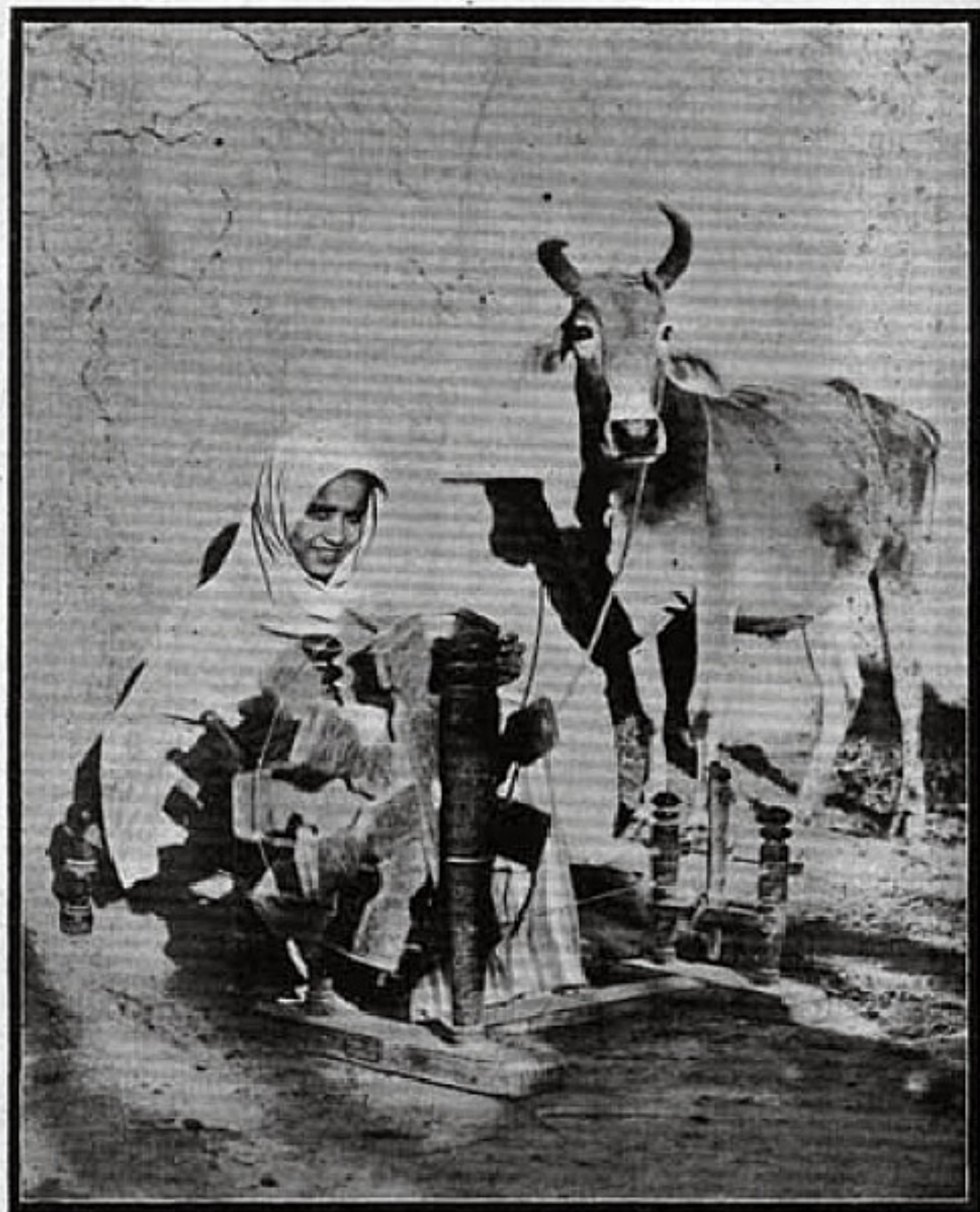
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

गाय-चर्खा देश का सहारा!

प्रेषिका:
शोभा नाग - दिल्ली

Photo by Prasad
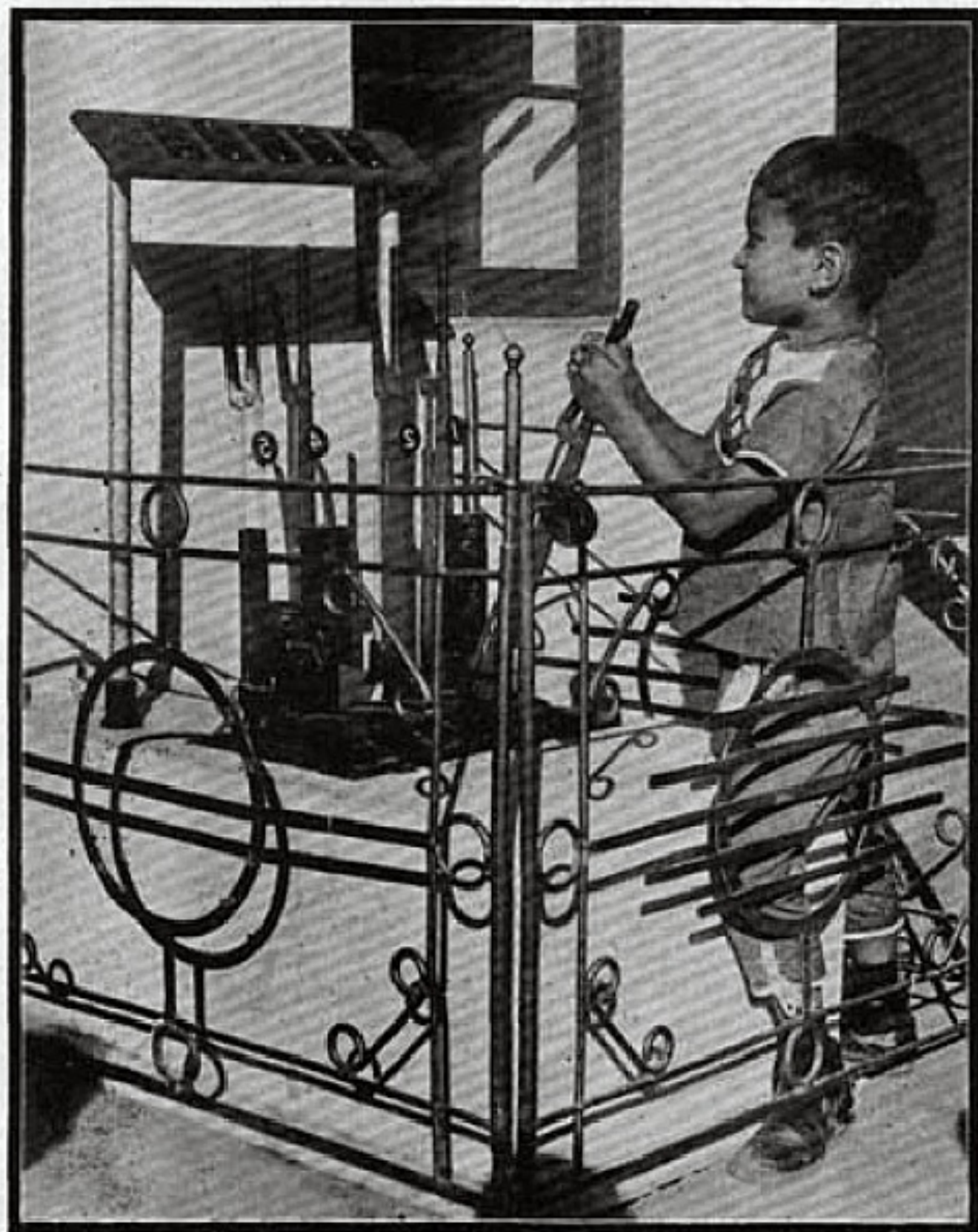
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

प्रगति पथ पर देश हमारा!!

प्रेषिका :
शोभा नाग - दिल्ली

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

दिसम्बर १९६४ :: पारितोषिक १०)
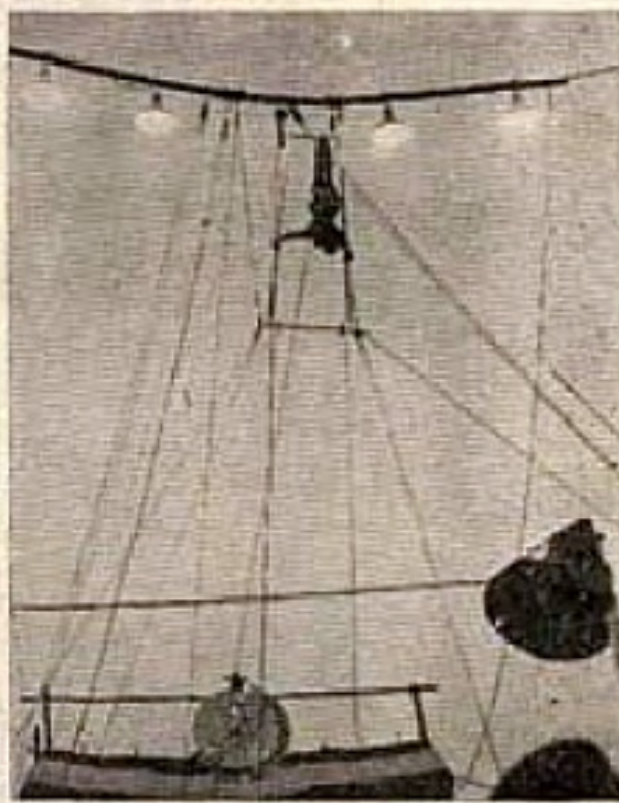
कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ अक्तूबर १९६४ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास-२६

अक्तूबर – प्रतियोगिता – फल

अक्तूबर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषिका को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **गाय-चर्खा देश का सहारा !**
दूसरा फ़ोटो: **प्रगति पथ पर देश हमारा !!**

प्रेषिका: **शोभा नाग**
८/२ सी पे. ए. ए. करोलबाग, नयी दिल्ली-५.

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

कौन सी जीविका आपके लिए उपयुक्त है ?

सही चुनाव के लिए इन पुस्तिकाओं को पढ़िए

वन अधिकारी	कम्पोजिटर
सिविल इंजीनियर	प्रूफ रीडर
बिजली इंजीनियर	दांत का डाक्टर
टेली-कम्यूनिकेशन इंजीनियर	टीका लगाने वाला
लोक स्वास्थ्य इंजीनियर	मैडिकल लेबोरेटरी टैक्नीशियन
नक्शानवीस (सिविल इंजीनियरी)	प्राथमिक स्कूल का अध्यापक
नक्शानवीस (बिजली इंजीनियरी)	रेडियोग्राफर
ट्रेसर	ग्राम सेवक
आई. सी. इंजिन मेकेनिक	समाज कल्याण कार्यकर्ता
मिल राइट	कास्ट एकाउन्टेंट
मशीन फ़िटर	मौसम वैज्ञानिक
मशीनिस्ट	नर्सिंग तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यवसाय,
रेडियो टैक्नीशियन	

अपनी पुस्तिकाएं (अंग्रेजी या हिन्दी में) अपने रोजगार दफ्तर और सरकारी पुस्तक विक्रेताओं से खरीदिए ।

रोजगार और प्रशिक्षण महानिदेशालय

भारत सरकार

DA 64/174
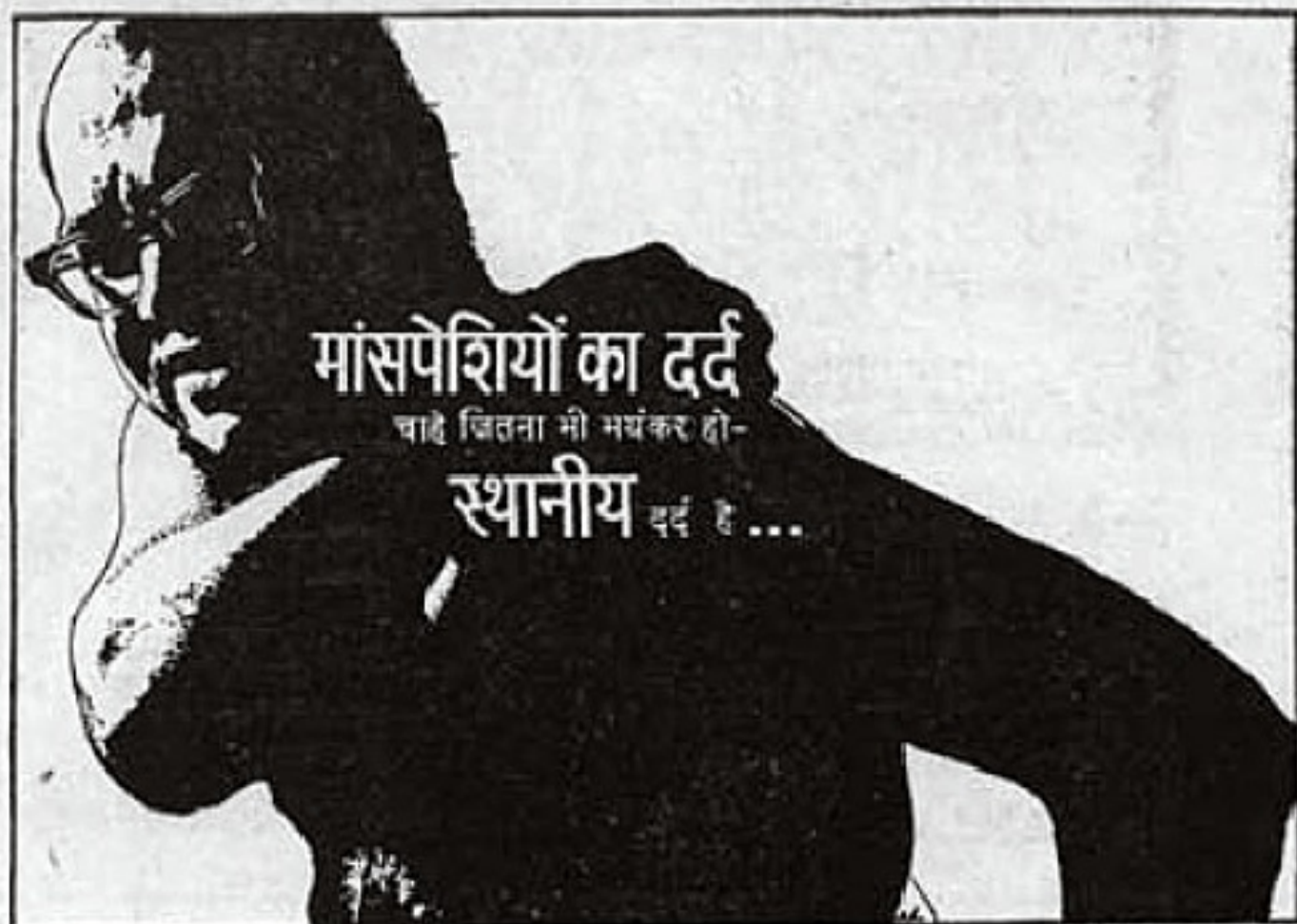
मांसपेशियों का दर्द

चाहे जितना भी भयंकर हो-

स्थानीय दर्द है...

अमृतांजन

दर्द को फौरन दूर करता है

स्थानीय दर्द को दूर करने के लिये दवा खाने की क्या जरूरत है? दर्द की जगह पर अमृतांजन मलिये—दर्द, जाता रहेगा, आप राहत महसूस करेंगे। अमृतांजन पेन बाम वैज्ञानिक मिश्रण वाली १० दवाइयों की एक दवा है—मांस पेशियों के दर्द, सिर दर्द, मोच और चोट के दर्द के लिये बिल्कुल अचूक है, निर्दोष है, प्रभावकारी है। अमृतांजन का इस्तेमाल सीने में जमा कफ, सर्दी और जुकाम में भी जल्द से जल्द आराम पहुँचाता है। एक बार इतना जान लीजिये कि इसकी एक ही शीशी आपके घर में महीनों चलती है। आप भी अमृतांजन की एक शीशी बराबर ही पास रखिये। ७० वर्षों से भी ज्यादे दिनों से अमृतांजन एक घरेलू दवा के रूप में विख्यात है।

अमृतांजन १० दवाइयों की एक दवा—दर्द और जुकाम में अचूक।

अमृतांजन लिमिटेड, मद्रास • बम्बई • कलकत्ता • दिल्ली

JWT/AM 2816A